लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा
Dedicated to Truth in Public Interest

अठारहवाँ अंक
2018-19

वन्दे मातरम्

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), पश्चिम बंगाल
ट्रेजरी बिल्डिंग्स,कोलकाता - 700 001

पत्रिका विमोचन समारोह
''वन्दे मातरम्''
सत्रहवाँ अंक

सत्यमेव जयते

हिन्दी पत्रिका

वन्दे मातरम्

लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा
Dedicated to Truth in Public Interest

अर्धवार्षिक पत्रिका
अठारहवाँ अंक
2018-19

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी),
पश्चिम बंगाल, ट्रेजरी बिल्डिंग्स,कोलकाता - 700 001

पत्रिका परिवार

संरक्षक	:	श्रीमती अदिति रॉय चौधुरी प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), पश्चिम बंगाल
परामर्शदातृ समिति	:	श्री गौरव राय, उपमहालेखाकार (प्रशासन) श्री शीश राम, उपमहालेखाकार (पेंशन) श्री राहुल कुमार, उप महालेखाकार (निधि, लेखा एवं वी. एल. सी.)
प्रधान संपादक	:	श्री रेबती रंजन पोद्दार, लेखा अधिकारी
संपादक	:	श्री चन्दन कुमार बढ़ई, हिन्दी अधिकारी
उप संपादक	:	श्री सन्नी कुमार, कनिष्ठ अनुवादक श्रीमती नमिता चंद्रा, वरिष्ठ अनुवादक
सहायक	:	श्री कुन्दन कुमार रविदास, कनिष्ठ अनुवादक श्री जितेन्द्र शर्मा, वरिष्ठ लेखाकार श्रीमती प्रियंका संजीव सिंह, कनिष्ठ अनुवादक श्रीमती आस्था गुप्ता, लेखाकार श्री अमित कुमार, वरिष्ठ लेखाकार
सहायक/टंकण कार्य	:	श्री अतुल कुमार, लेखाकार

रचनाकारों के विचारों से संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है क्योंकि वे उनके निजी विचार होते हैं।

अदिति रॉय चौधुरी

प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हक.), पश्चिम बंगाल

ट्रेजरी बिल्डिंग्स, कोलकाता – 700001

संदेश

हमारे कार्यालय की हिन्दी पत्रिका ''वन्दे मातरम्'' के अठारहवें अंक का प्रकाशन राजभाषा हिन्दी के प्रति स्नेह का परिचायक है। सरकारी कामकाज में राजभाषा हिन्दी के व्यापक प्रयोग एवं सर्वांगिक विकास हेतु इस पत्रिका का प्रकाशन किया गया है। मैं पत्रिका के विगत अंक हेतु पाठक वर्ग से मिले सुझाव एवं स्नेह के लिए कृतज्ञ हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि नवीनतम अंक को भी आप सभी की सराहना पहले की तरह ही मिलती रहेगी।

इस पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु पत्रिका परिवार को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ।

अदिति रॉय चौधुरी

सत्यमेव जयते

गौरव राय

उपमहालेखाकार (प्रशासन)

संदेश

कार्यालयी पत्रिका ''वन्दे मातरम्'' के अठारहवें अंक के प्रकाशन पर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है। राजभाषा हिन्दी के प्रचार – प्रसार में कार्यालयी पत्रिका का भी सराहनीय योगदान होता है। 'पत्रिका' के प्रकाशन से हमारे कार्यालय के रचनाकार अधिकारियों एवं कर्मचारियों की अभिव्यक्ति को उचित मंच मिलता है। वन्दे मातरम् का नियमित प्रकाशन हमारे लिए हर्ष का विषय है। आशा है कि यह अंक पाठकों के लिए अधिक ज्ञानवर्धक एवं रोचक सिद्ध होगा।

पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु संपादकीय मण्डल को बधाई एवं पत्रिका के स्वर्णिम भविष्य हेतु मेरी शुभकामनाएँ।

गौरव राय

<u>संपादकीय</u>

हमारे कार्यालय की हिन्दी अर्द्धवार्षिक पत्रिका “वंदे मातरम्” का अठारहवाँ अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर हर्ष का अनुभव हो रहा है । इस कार्यालय के रचनाकार एवं संपादक मण्डल के सदस्यों के सहयोग से यह सुंदर पत्रिका अस्तित्व में आई है । किसी देश की सांस्कृतिक चेतना उसकी भाषा और साहित्य से प्रतिबिंबित होती है । भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं है वरन यह समाज को एकसूत्र में बांधने का कार्य भी करती है । देवनागरी लिपि में लिखी हिन्दी भाषा हमारी राजभाषा है । अपनी व्यापकता, सांस्कृतिक विरासत एवं वैज्ञानिकता के कारण यह भाषा सुबोध, सरल एवं सहज है । हिन्दी भाषा का शब्द भंडार इतना विशाल है कि हमें अपनी अभिव्यक्ति के लिए किसी विदेशी भाषा को आयात करने की आवश्यकता नहीं है । बदलते परिवेश में हिन्दी अपनी सशक्त उपस्थिति सिनेमा, संगीत, मीडिया, इंटरनेट आदि में प्रदर्शित कर रही है ।

मुझे विश्वास है कि राजभाषा हिन्दी की प्रगति में हमारी पत्रिका योगदान देने में सफल होगी । आशा करता हूँ कि सभी पाठकगण इस पत्रिका में समाहित कहानियों, कविताओं तथा लेखों का आनंद लेंगे तथा अपने बहुमूल्य सुझावों से हमें उपकृत करेंगे ।

चन्दन कुमार बढ़ई
(संपादक)
हिन्दी अधिकारी

आपके पत्र

प्रधान निदेशक लेखापरीक्षा (केंद्रीय) चेन्नै का कार्यालय
"लेखापरीक्षा भवन", 361, अण्णा सालै, तेनामपेट, चेन्नै - 600 018

सं प्रनिलेप(के) /हिंदी अनुभाग/14-02/2018-19/258 दिनांक: 14.3.2019

सेवा में,
लेखा अधिकारी (प्रशासन हिन्दी सेल)
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), पश्चिम बंगाल
ट्रेजरी बिल्डिंग्स, 2, गवर्नमेंट प्लेस, वेस्ट, कोलकाता -700 001

विषय : अर्धवार्षिक पत्रिका 'वंदे मातरम' के सत्रहवें अंक की प्राप्ति ।

महोदय,
आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित अर्धवार्षिक पत्रिका 'वंदे मातरम' के सत्रहवें अंक की एक प्रति इस कार्यालय मे प्राप्त हुई। धन्यवाद।

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएं सरल,सहज,पठनीय, प्रेरक एवं रोचक हैं । पत्रिका का मुखपृष्ठ अत्याधिक आकर्षक है । पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए सभी रचनाकार एवं संपादक मंडल बधाई के पात्र हैं।

पत्रिका की निरंतर प्रगति एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए इस कार्यालय की ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

भवदीया
14.3.19
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (प्रशासन)

भारतीय लेखा तथा लेखा परीक्षा विभाग
कार्यालय महालेखाकार (लेखा परीक्षा), पंजाब
प्लाट नं० 21, सैक्टर 17, चण्डीगढ़ – 160017
Indian Audit & Accounts Department
Office of the Accountant General (Audit) Punjab
Plot No. 21, Sector 17, Chandigarh-160017
क्रमांक /No. हि.क./हिंदी पत्रिका समीक्षा/2018-19/547.
दिनांक /Date 11.03.2019

सेवा मे
लेखा अधिकारी (प्रशासन हिन्दी सेल)
कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा व हकदारी) पश्चिम बंगाल
ट्रेजरी बिल्डिंग्स,2,गवर्नमेंट प्लेस
कोलकाता-700001

विषय: **अर्धवार्षिक पत्रिका 'वंदे मातरम्' के सत्रहवें अंक का प्रेषण ।**
संदर्भ: पी.ए.जी.ए.ई.डबल्यू.बी./02/05/वं.मा./14/2018-19/590 दिनांक-25.02.2019.

महोदय
संदर्भित पत्र के साथ आपके कार्यालय की हिन्दी पत्रिका "वंदे मातरम्" की प्राप्ति हुई । अतः आभार स्वीकार करें ।
इस पत्रिका में समाविष्ट सभी रचनाएं पाठकों के लिए प्रभावशाली, रोचक, ज्ञानवर्द्धक, उच्चकोटि एवं मन को लुभाने वाली हैं । श्री सन्नी कुमार जी का लेख 'हमारी हिंदी', श्री चंदन कुमार जी की कहानी 'भितिचित्र', श्रीमती तापसी आचार्य (बसाक) जी की कहानी 'अग्नि-शुद्धि', श्री पंकज कुमार गुप्ता जी की कविता 'सुनहरे पल', और श्री अमित कुमार जी की कविता 'चलते जाना है' पत्रिका के विशेष आकर्षण है ।
हिंदी की सार्थकता के लिए प्रयासरत आपकी पत्रिका "वंदे मातरम्" के उज्ज्वल भविष्य के लिए 'सुगंधा' परिवार की हार्दिक शुभकामनाएं ।

भवदीय,
11-03-2019
हिंदी अधिकारी

ई-मेल/E-mail : agaupunjab@cag.gov.in, ई.पी.ए.बी.एक्स. दूरभाष/Tel.: EPABX-0172-2759200, फैक्स/Fax : 0172-2773931, टैलिग्राम/Telegram : Punjaudit

---

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) – द्वितीय का कार्यालय, मध्यप्रदेश
OFFICE OF THE ACCOUNTANT GENERAL (A&E)-II, Madhya Pradesh

क्रमांक: हिन्दी कक्ष-2/पत्रिका पावती/454 दिनांक : 07.03.2019

सेवा मे,
लेखा अधिकारी (प्रशासन हिन्दी सैल)
कार्यालय प्रधान महालेखाकार(लेखा एवं हक), पश्चिम बंगाल
ट्रेजरी बिल्डिंग्स, 2, गवर्नमेंट प्लेस (प.), कोलकाता-700001

विषय: आपके कार्यालय की हिन्दी पत्रिका " वन्दे मातरम् " की पावती एवं अभिमत ।

महोदय,
आपके कार्यालय के पत्र सं पी ए जी ए ई डबल्यू बी/02/05/वं.मा./14/2018-19/564, दिनांक: 19.02.2019 के साथ संलग्न अर्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका " वन्दे मातरम् " के 17वें अंक की एक प्रति प्राप्त हुई, एतदर्थ धन्यवाद ।

पत्रिका का आवरण पृष्ठ पर कोलकाता के समृद्ध मनोरम दृश्य अत्यंत सुखद व अनुभूतिपूर्ण हैं । पत्रिका में समाविष्ट " भित्तिचित्र (कहानी/श्री चन्दन कुमार)", "हमारी हिन्दी (लेख/श्री सनी कुमार)", "घर-घर की कहानी (लेख/श्री अमित कुमार) " के साथ-साथ अन्य सभी लेख एवं कविताएं अत्यंत ही रोचक व सराहनीय हैं ।

पत्रिका के सफल सम्पादन हेतु संपादक मंडल बधाई के पात्र है । पत्रिका की निरंतर प्रगति हेतु हमारी हार्दिक शुभकामनाएं ।

भवदीय,
वरिष्ठ लेखा अधिकारी (हिन्दी)

Address : Lekha Bhawan, Jhansi Road, Gwalior-474002
Phone : 0751-2323968
Fax : 0751-2432194

पता : लेखा भवन, झाँसी रोड, ग्वालियर – 474002
दूरभाष : 0751-2323968
फैक्स : 0751-2432194

कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा
आर्थिक एव सेवा मंत्रालय
ए.जी.सी.आर भवन
आई.पी.एस्टेट नई दिल्ली-110002

पत्रांकः- ए.एम.जी.-1/हिन्दी/2(ii)/हिन्दी पत्रिका/2017-18-19/338 दिनांक 13 MAR 2019

सेवा में,

कार्यालय प्रधान महालेखाकार
(लेखा एवं हकदारी), पश्चिम बंगाल
ट्रेजरी बिल्डिंग कोलकाता-700 001

विषयः- अर्धवार्षिक पत्रिका "वंदेमातरम्" के सत्रवें अंक का प्रेषण।

महोदय,

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका "वंदेमातरम्" 17वें अंक के प्रति प्राप्त हुई,धन्यवाद। समाविष्ट सभी रचनाएं सुपाठ्य, उत्कृष्ट, एवं ज्ञानवर्धक है। पत्रिका के सभी रचनाकारों एवं संपादक मंडल को पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए बधाई एवं पत्रिका के उत्तरोतर प्रगति के लिए हार्दिक शुभकामनाएं।

भवदीय
11/3/19
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी
(राजभाषा)

डाक व दूरसंचार लेखापरीक्षा कार्यालय
7, कोयलाघाट स्टीट,कोलकाता–700001
दूरभाष संख्या–2210–5875,फैक्स–2210–5594
ई–मेल–brptkolkata@cag.gov.in

संख्या–प्रशासन–I/आई–303/हिन्दी रचना प्रकाशन/2018/2610 दिनांक–11/03/2019

सेवा में,

लेखा अधिकारी (प्रशासन हिन्दी सेल),
भारतीय लेखा तथा लेखापरीक्षा विभाग,
प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हक), पश्चिम बंगाल,
टेजरी बिल्डिंग्स, 2, गवर्नमेंट प्लेस, वेस्ट,
कोलकाता–700001.

महालेखाकार (लेखा एवं हक) प. बं.
A. G. (A&E) West Bengal
RCC 295667 /18-19
12 MAR 2019
Received without Verification
O/o the A. G. (A&E), W. B.
Treasury Building, Kolkata-1

विषय– अर्धवार्षिक पत्रिका "वंदे मातरम्" के सत्रहवें अंक के प्रेषण के संबंध में।

महोदय/महोदया,

उपरोक्त विषय पर आपके कार्यालय के पत्र संख्या पी.ए.जी.ए.ई.डब्ल्यू.बी./02/05/वं.मा./14/2018–19/652 दिनांक–28.02.2019 की पावती भेजी जा रही है।

भवदीय,
11.03.19
वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी (प्रशासन)

भारतीय लेखापरीक्षा और लेखा विभाग
कार्यालय महानिदेशक वाणिज्यिक लेखापरीक्षा
तथा पदेन सदस्य, लेखापरीक्षा बोर्ड - I, मुम्बई

INDIAN AUDIT AND ACCOUNTS DEPARTMENT
OFFICE OF THE DIRECTOR GENERAL OF
COMMERCIAL AUDIT AND EX-OFFICIO MEMBER
AUDIT BOARD-I, MUMBAI

संख्या: एमएबी-1/प्रशा./अन्य का. पत्रिका/2018-19/2656

5 MAR 2019

सेवा में,

सम्पादक (वंदे मातरम्)
प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हक), पश्चिम बंगाल
ट्रेजरी बिल्डींग्स, 2, गवर्नमेंट प्लेस, वेस्ट
कोलकाता-700001

विषय : हिंदी पत्रिका "वंदे मातरम्" के सत्रहवें अंक की प्राप्ति।

महोदय,

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिंदी पत्रिका **"वंदे मातरम्"** के सत्रहवें अंक की प्राप्ति हुई। यह पत्रिका कार्यालय के कार्मिकों द्वारा मनोयोग से पढ़ी गई। अपनी पत्रिका भेजने के लिए धन्यवाद।

पत्रिका का आवरण पृष्ठ आकर्षक है तथा पत्रिका के आंतरिक पृष्ठों की सरलता भी मनोहर है। पत्रिका में छपी रचनाओं ने समाज के विभिन्न पहलुओं को स्पर्श किया है। इसके लिए सभी रचनाकार बधाई के पात्र हैं। पत्रिका का सफल प्रकाशन निश्चित रूप से संपादक मंडल के परिश्रम का प्रतिफल है।

पत्रिका के उज्जवल भविष्य हेतु कार्यालय की ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

भवदीय,
लेखापरीक्षा अधिकारी (प्रशासन)

सातवी मंजिल, आर.टी.आई. बिल्डींग, प्लॉट नं. सी-2, जी. एन. ब्लॉक, एशियन हार्ट इन्स्टिट्यूट के पीछे, बान्द्रा-कुर्ला कॉम्प्लेक्स, बान्द्रा (पूर्व), मुंबई - 400 051.
Seventh Floor, R.T.I. Building, Plot No. C-2, G. N. Block, Behind Asian Heart Institute, Bandra-Kurla Complex, Bandra (E), Mumbai - 400 051.
प्रशासन : 26520873 • प्रतिवेदन : 26502843 • फैक्स : 26527165 • ई-मेल : mabMumbai1@cag.gov.in
Admin : 26520873 • Report : 26502843 • Fax : 26527165 • E-mail : mabMumbai1@cag.gov.in

---

"आपके स्नेह के हम आभारी हैं कि आपने हमें अपना अभिमत भेजा। पत्रिका के बेहतर भविष्य के लिए इसी प्रकार अपनी राय एवं सुझाव देकर हमारा उचित मार्गदर्शन करते रहें।"

अनुक्रमणिका

क्रम संख्या	शीर्षक	रचनाकार	पृष्ठ संख्या
1.	लोकतन्त्र (लेख)	श्री नबेन्दु दाशगुप्त	1
2.	माँ काली (कविता)	श्री सन्नी कुमार	5
3.	अपना घर (कहानी)	श्रीमती तापसी आचार्य (बसाक)	6
4.	खूबसूरत यादें (कविता)	श्री राजेश कुमार	10
5.	कथादेश (लेख)	श्री चन्दन कुमार **बढ़ई**	12
6.	वैदही (कविता)	श्रीमती प्रियंका संजीव सिंह	15
7.	संघर्ष से सफलता तक (कहानी)	श्रीमती आस्था गुप्ता	16
8.	दौड़ (कविता)	श्री जितेंद्र शर्मा	20
9.	हिन्दी एक व्यवहार (एकाँकी)	श्री सन्नी कुमार	21
10.	वक़्त (कविता)	सुश्री आरती शर्मा	25
11.	संवेदना (कहानी)	श्रीमती सुस्मिता सरकार	26
12.	समय (कविता)	श्री अमित कुमार	28
13.	गाय की रोटी (कहानी)	श्रीमती प्रियंका संजीव सिंह	30
14.	यादें (कविता)	श्री पंकज कुमार गुप्ता	32
15.	उम्मीद (कहानी)	श्री कुन्दन कुमार रविदास	34
16.	कविता (कविता)	श्री नबेन्दु दाशगुप्त	40
17.	ब्रांड बनता आदमी (लेख)	श्री अमित कुमार	42
18.	मुट्ठी में चाँद (कहानी)	श्रीमती सुस्मिता सरकार	46

टिप्पणियाँ हिन्दी में लिखिए।
मसौदे हिन्दी में तैयार कीजिए।
शब्दों के लिए अटकिए नहीं।
अशुद्धियों से घबराइए नहीं।
अभ्यास अविलंब आरंभ कीजिए।

हिन्दी कार्यशाला की झलकियाँ

हिन्दी कार्यशाला की झलकियाँ

लोकतंत्र

''लोकतंत्र'' यह शब्द आजकल कहीं भी कभी भी चर्चा में आ जाता है । खास करके जब प्रशासनिक मामले में आलोचना हो या बहस हो अथवा समालोचना हो तो लोकतंत्र, लोकतांत्रिक शब्द का आगमन व चर्चा हो ही जाता है । चाहे वह आत्मपक्ष के समर्थन के लिए हो या विपक्ष की आलोचना के लिए हो। इस अवसर पर लोकतंत्र के बारे में कुछ चर्चा कर लेते हैं ।

लोकतंत्र किसी देश की एक प्रशासनिक व्यवस्था है। पहले देश चलाते थे राजा, जिसे राजतंत्र कहते है, यह हम जानते हैं। समय के अनुसार आज राजतंत्र विलुप्तप्राय है । लगभग पूरे विश्व में आज लोकतंत्र भारत की प्रशासनिक व्यवस्था में भी लोकतंत्र को अपनाया गया है। 1947 में जब भारत ने ब्रिटिश शासन से मुक्त होकर आजादी प्राप्त की, तब भारत में कई प्रदेशों में राजतंत्र विराजमान था।आजादी के समय एवं उसके बाद उन प्रदेशो को लोकतंत्र में शामिल कर लिया गया । आज पूरा भारत एक संप्रभुतासम्पन्न लोकतांत्रिक राष्ट्र है।

लोकतंत्र दो प्रकार के होते हैं। पहला संसदीय लोकतंत्र और दूसरा राष्ट्रपति शासित लोकतंत्र। भारत ने संसदीय लोकतंत्र को अपनाया है। राष्ट्रपति शासित लोकतंत्र में राष्ट्रपति कार्यपालक तथा सरकार का प्रधान होता है। वे जनता द्वारा सीधे चुने जाते हैं। वे संसद के समक्ष उत्तरदायी नहीं होते है। अमेरिका, फ्रांस, पुर्तगाल,पनामा, मैक्सिको, अफगानिस्तान, रूस आदि ऐसे लोकतंत्र के उदाहरण है। संसदीय लाकतंत्र में प्रशासनिक प्रधान होता है- प्रधानमंत्री । संसदीय लोकतंत्र द्विदलीय एवं बहुदलीय दो प्रकार का हो सकता है। जैसे ब्रिटेन की शासनव्यवसथ में द्विदलीय है जबकि भारत की शासन व्यवस्था में लोकतंत्र बहुदलीय है।

भारत की शासन व्यवस्था संसदीय लोकतंत्र है । इस व्यवस्था में कार्यपालक प्रधान राष्ट्रपति कोटा है। जबकि प्रधानमंत्री संसद के संख्याबहुल दल तथा सदस्य द्वारा मनोनित नेता एवं केंद्रीय मंत्रीमंडल का प्रधान होता है। यह वास्तविक प्रशासनिक तथा सरकारी प्रधान भी होता है। संसद द्वारा लिए गए सभी निर्णय राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद ही कार्यान्वित होते हैं। परंतु व्यतिक्रम को छोड़कर राष्ट्रपति को निर्णय लेने का कोई अधिकार नहीं है। लोकतंत्र की परिभाषाओं में अमरीकी राष्ट्रपति अब्राहन लिंकन के अनुसार - ''सरकार जनता का , जनता के द्वारा, जनता के लिए'' - सबसे सरल एवं ग्रहणीय है।

संसदीय लोकतंत्र में प्रशासनिक केंद्र संसद है इसलिए इसे संसदीय कहा जाता है। इसके दो कक्ष होते है। पहला निम्न सदन जिसे लोकसभा कहा जाता है दूसरा उच्च सदन जिसे राज्यसभा कहा जाता है। भारत के लोकसभा में कुल 543 सदस्य होते हैं और वे सभी जनता द्वारा सीधे चुने जाते हैं। राज्यसभा में कुल 296 सदस्य होते है और जनता उनके चुनाव में सीधा भाग नहीं लेती है। वे लोकसभा एवं राज्य विधानसभा के सदस्य द्वारा निर्वाचित होते हैं । चूँकि भारत का शासन व्यवस्था संघीय है अर्थात् कई राज्यों का समूह है। संसद देश की केंद्रीय शासन व्यवस्था का केंद्र है और राज्यों का प्रशासनिक केंद्र है राज्य विधानसभा। संसद के निम्नसदन अर्थात् लोकसभा एवं राज्य विधानसभा का कार्यकाल 5 साल का होता है अर्थात् अस्थायी है। जबकि राज्यसभा स्थायी होता है एवं इसके एक तिहाई सदस्य प्रत्यके दो वर्ष के अंतराल में सेवानिवृत्त हो जाते है। एक सदस्य का कार्यकाल छह वर्ष का होता है। राज्य विधानमंडल मुख्यत: एक सदनीय ही होता है । केवल उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र जैसे राज्यों में दो सदन है। दूसरे सदन को विधानपरिषद कहा जाता है। संसद के सदस्यों को सांसद एवं विधानमंडल के सदस्यों को विधायक कहा जाता है। राज्य प्रशासन के संबंध में भी अनुरूप व्यवस्था है। यहॉ कार्यपालक प्रधान राज्यपाल होता है जिन्हें केंद्र सरकार द्वारा मनोनित किया जाता है।

भारत के लोकतंत्र के संबंध में इतनी मूलभूत जानकारी हम सभी को है। परंतु लोकतंत्र की सफलता के लिए कुछ जिनका ध्यान रखना बहुत ही आवश्यक है, अन्यथा लोकतंत्र का जो सुफल है वह हमें प्राप्त नहीं हो पाएगा।

1. शर्तो में से सबसे महत्वपूर्ण है सार्वजनिक शिक्षा एवं शिक्षित मतदाता हैं। सदस्य बनेंगे और जो सदस्यों को चयन करेंगे। एक सचेतन शिक्षित मतदाता ही सुयोग्य उम्मीदवार का चयन कर सकता है। शिक्षित का मतलब यह नहीं है कि ढेर सारी डिग्रियॉ हो। बिना किसी डिग्री के भी व्यक्ति की सोच-विचार की क्षमता अच्छी हो सकती है। आम तौर पर एक शिक्षित व्यक्ति से यही उम्मीद रखी जाती है कि उन्हें सही-गलत, अच्छे-बुरे का विचार करने की क्षमता होनी चाहिए। लोकतंत्र में विधानमंडल (legislature) संघीय विधायिका (Union Legislature) के लिए योग्य सदस्यों का चयन बहुत ही महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है। बिना किसी सलाह, दबाव या प्रलोभन के अगर मतदाता मतदान करें तभी योग्य उम्मीदवार संसद में पँहुचेंगे। साथ ही प्रशासन की बागडोर भी योग्य हाथों में होने का संभावना सुनिश्चित होगी।

2. लोकतंत्र में एक अच्छे संगठित एवं सक्रिय विपक्ष का होना भी बहुत ही आवश्यक है। विपक्ष का काम है सरकार के कामकाज की आलोचना कर सलाह देना न कि केवल विरोध करने के लिए ही विरोध करना। विपक्ष, सरकार पक्ष की गलती की आलोचना

करते हुए सही दिशा दिखाएगा। विपक्ष अगर सक्रिय न हो तो सरकार पक्ष को अपनी मनमानी करने मौका मिल जाएगा।

3. एक संगठित, शक्तिशाली स्थानीय सरकार लोकतंत्र के लिए कार्यकर भूमिका निभाती है। एक स्थानीय सरकार के माध्यम से जनता अपनी स्थानीय समस्याओं का हल असानी से कर सकती है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में यह तृणमूल स्तर की ईकाई है। जैसे कि एक सशक्त नींव के बगैर एक अच्छा भवन नहीं बन सकता वैसे एक अच्छी स्थानीय सरकार के बिना लोकतंत्र सफल नहीं हो सकता।

4. लोकतांत्रिक सरकार में कोई व्यक्ति या दल को एकतरफा काम करने एवं क्षमता प्रयोग करने की इजाजत नहीं है। यह तभी संभव होता है जब लोगो मे एक उच्च कोटि की सहिष्णुता और राष्ट्रहित की मानसिकता हो।

5. एक परिपक्व नेतृत्व होना आवश्यक है जो दल के साथ - साथ सरकार तथा राष्ट्र को सही नेतृत्व देकर सही नीति निर्धारण व निर्णय ले सके एवं देश की संप्रभुता की रक्षा करे।

6. प्रेस की स्वतंत्रता - प्रेस को कहा जाता है फोर्थ एस्टेट अर्थात् चौथा खंभा। प्रेस एक माध्यम है जिसके द्वारा जनता की इच्छा, चाहत, समस्या सरकार तक पहुँचती है। एक स्वतंत्र निरपेक्ष प्रेस की सहायता से जनता अपना अभिमत व्यक्त करने की आजादी पाती है तथा सरकार की नीति की आलोचना और तर्क किया जा सकता है तथा उसकी समर्थन भी जाता सकती है।

7. समाज में आर्थिक समानता भी सफल लोकतंत्र का सहायक होता है। आय एवं सम्पदा के आवंटन में ज्यादा से ज्यादा समानता, जीविका के लिए पर्याप्त सुविधा लोकतंत्र को सफल बनाने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है।

8. नागरिक मन में नागरिक भावना (सिविक सेंस) होना एक आवश्यक विषय है। प्रत्येक नागरिक के मन में समाज के सामूहिक जीवन के प्रति उचित-अनुचित विचार करने एवं उस हिसाब से आचरण करने की मानसिकता का पोषण करना चाहिए।

9. स्वतंत्र विचार व्यवस्था, चुनावी मशिनरी, स्वस्थ-शिक्षा व्यवस्था जैसे विषय लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण संस्थान है। इसके बिना लोकतंत्र की सही पहचान मुश्किल है।

यह सभी शर्ते लोकतंत्र के सफल संचालन के लिए अनिवार्य है । यह स्थितियॉ लोकतंत्र के अवगुणों को मिटाकर सफलता की मार्ग प्रशस्त करते हैं। परंतु वर्तमान में कुलमिलाकर भारत की जो स्थिति है उसमें से विंदु 1, 2, 7 एवं 8 के विषय में कमियॉ देखी जा रही है । शिक्षा के क्षेत्र में पहले की अपेक्षा सुविधा तो बहुत उपलबद्ध करायी गयी है परंतु शिक्षा की गुणवत्ता में संतोषजनक प्रगति नहीं हुई है जिससे लोगों का चिंतन - मनन और ज्यादा विकसित हो तथा उदार हो सके । विपक्ष की भूमिका के रूप में प्रगतिशील विचारों का पोषण एवं उसकी सकारात्मक सोच भी अपेक्षित है । देश में गरीबी व बेरोजगारी अभी भी हर कदम पर एक गतिरोध बनके खड़ा है । शिक्षा का अभाव (साक्षरता का नहीं) के कारण नागरिक-भावना में भी कमी है । जिसके कारण सामाजिक/राष्ट्र हित के बदले व्यक्ति-हित प्रधानता पा रही है । अत: भारत के लोकतंत्र को सफल बनाने हेतु इन सभी मामले में ज्यादा ध्यान ज्यादा देना आवश्यक है । केवल चर्चा-परिचर्चा व आलोचना करके लोकतंत्र सफल नहीं बनाया जा सकता ।

नबेन्दु दाशगुप्त
सहायक लेखा अधिकारी

माँ काली

धधक-धधक उठ रही ज्वाला
माँ तेरे सामने, खुलते ही तेरे चक्षुओं के
छा जाती है चहु-ओर
सहस्त्र-सहस्त्र साये मृत्यु के ।

रक्त से सने हैं माँ तेरे अस्त्र-शस्त्र
कोई दुष्ट-दानव टिक न पाये तेरे समक्ष
माँ तेरी प्रचंड क्रोध और शक्ति में ही है भक्ति
शीश झुकाये हम पंथी तेरे सामने - है महा-शक्ति ।

तू मस्ती में नाचे माँ,
काल-भय ही तेरा नाम
है दक्षिणा काली तू चार भुजा वाली
बीस भुजा हो तो, है तू महा-काली ।

सन्नी कुमार
कनिष्ठ अनुवादक

अपना घर

मैं, परमेश्वर, अमिताभ, शिवनाथ, और रमन एक साथ कोलकाता के आयकर विभाग में काम करते हैं । आज एक साथ नौकरी करते बीस साल हो गए । हमलोगों में से किसी का घर कोलकाता शहर में नहीं था । हमलोग किराये के घर में रहते थे और मेस में खाना खाते थे । हमलोग की तैनाती अलग अलग अनुभाग एवं अलग बिल्डिंग्स में होने के बावजूद शाम में घर एक साथ ही घर लौटते थे । हमलोग साथ में बहुत मौज मस्ती करते थे । शुक्रवार को ऑफिस से छुट्टी होने के बाद हम सभी अपने अपने घर की ओर दौड़ते थे । धीरे- धीरे हमलोगों की शादी होने लगी और हमलोग अपने परिवार के साथ अलग अलग मकानों में रहने लगें । लेकिन हमलोगों की दोस्ती टूटी नहीं । हमलोग बीच-बीच में समय निकालकर मिला करते थे । हमलोग एक दूसरे का दुख-सुख बांटा करते थे । हमलोग साल में एक बार अपने-अपने परिवार के साथ पिकनिक भी जाया करते थे ।

इस तरह से हम पांचों स्थायी रूप से कोलकाता के निवासी बन गए । परमेश्वर ने बैंक से लोन लेकर बालीगंज के पास एक फ्लैट खरीदा था । वह अपने बच्चों को उधर ही पढ़ाने लगें । उसने मालदा मे स्थित अपनी पैतृक संपति अपने भाइयों में बेचकर पूरी तरह से कोलकाता में बस गया ।

अमिताभ का ससुराल डनलप में था । उनकी पत्नी अपने माता- पिता की एकलौती संतान थी । इस कारण वह अपने माता-पिता के करीब रहना चाहती थी । इस वजह से अमिताभ अपने ससुराल के पास ही किराये के मकान में रहने लगें । अमिताभ को घर खरीदने की जरूरत नहीं थी क्योंकि उसे ससुराल का संपति मिलने वाली थी ।

जब मैं पचास साल का हुआ तब मैं भी सर छुपाने के लिए एक घर लेने की कोशिश में लग गया । मैं सरकारी क्वार्टर में रहता हूँ । सेवानिवृत्ति के बाद मुझे क्वार्टर छोड़ना ही पड़ेगा ।

हमलोग जब एक साथ मिलते थे तब ये सब बातों पर चर्चा होती रहती थी । शिवनाथ को फ्लैट पसंद नहीं था । वह कोलकाता के आस-पास में जमीन लेकर मकान बनाने के चक्कर में था । लेकिन कोलकाता में जमीन मिलना उतना आसान नहीं । फिर भी उसकी कोशिश जारी है ।

रमन को लेकर बहुत समस्या है । शुरू से ही वह काफी कम बात करता था । उसके कंधों पर बहुत सारी पारिवारिक जिम्मेदारियाँ थी । फिर भी उसके होठों पर हर समय मुस्कान रहता था । अपने पिता की इच्छानुसार उसने एक गाँव की लड़की के साथ शादी की । उसकी

पत्नी शहर की संस्कृति कभी अपना नहीं पायी । वह शारीरिक रूप से काफी कमजोर थी और हमेशा बीमार ही रहा करती थी । रमन की जिंदगी हस्पताल के चक्कर लगाने में ही गुजरने लगी । हम सभी दोस्त भी उसे घर लेने को कहा करते थे । लेकिन वह पैसे की कमी बताकर बात को टाल देता था । सच्चे दोस्त होने की नाते हम सभी को रमन की चिंता रहती थी ।

ऑफिस में जब हम सभी मिलते हैं तो पुरानी बातें याद किया करते हैं । बात करते-करते घर, फ्लैट, मकान, शादी आदि का वर्णन होने लगता है । गाँव में रहने के कारण हमलोग शहरी जीवन कभी देखें नहीं थे । लेकिन यहाँ जीवन की सुख-सुविधा से संबन्धित सारी सुविधाएं मौजूद हैं । हमलोगों ने इस शहर को छोड़कर कहीं ओर जाने का कभी सोचा भी नहीं ।

अचानक एक दिन रमन ने बताया कि उसने शहर से पचास किलोमीटर दूर एक गाँव में जमीन खरीदा है । जब हम सभी इस शहरी जीवन के आदि हो चुके हैं तब गाँव में क्यों जमीन लेना । सही में, लगता है कि रमन का दिमाग खराब हो गया है । हम सभी दोस्त कुछ भी खरीदने से पहले एक दूसरे की सलाह लिया करते हैं । रमन ने किसी को कुछ बताया नहीं ओर गाँव की जमीन खरीदने में पैसे लगा दिया । परमेश्वर ने कहा "आदमी तो जीवन में आगे बढ़ता है लेकिन उधर जमीन लेकर तुम तो पीछे चले गए । जिंदगी भर तो शहर-गाँव दौड़ते रहे और अब बुढ़ापे में भी गाँव लौट जाएगा ।

हमलोगों ने एक दिन रमन को पकड़ा और कहा "क्या रे रमन तुमने जमीन खरीदा ।" रमन ने हमेशा की तरह मुस्कुराते हुए जवाब दिया "हाँ, सस्ते में मिल गया था, इसलिए । "कितना जमीन लिया । "रमन बोला "ढाई बीघा ।" हमलोगों ने आश्चर्य से बोला " ढाई बीघा ! फिर से खेती बारी शुरू करेगा, क्या ? कितने में लिया ?" रमन ने कहा "दो लाख ।"

अमिताभ ने हँसकर कहा " ढाई बीघा जमीन केवल दो लाख में । तालाब या नीचा जमीन होगा । बेकार में उस जगह में पैसा फंसाया उधर तो खेती बारी ही हो सकती है,मकान तो बनेगा नहीं ।" रमन ने कहा "नहीं –नहीं जमीन अच्छा है । वहाँ बड़े-बड़े पेड़ और बगल में एक बहता नदी है । वह जमीन मुझे बहुत पसंद आई । शहर में धुआँ, धूल आदि के बीच रहा, सेवानिवृत्ति के बाद अब प्रदूषण मुक्त जगह पर रहने की इच्छा है ।"

शिवनाथ ने पूछा "आसपास कोई हस्पताल है ? कोई स्कूल, कॉलेज या नर्सिंग होम है ?" रमन ने जवाब दिया " हाँ है, दस किलोमीटर की दूरी पर सब चीज है ।" शिवनाथ ने हँसकर कहा "बहुत अच्छा मैदान में बैठकर कृष्ण जाप करना और करेगा क्या जमीन जो पसंद आ गया ।" हम सभी ने प्रतिक्रिया दी कि रमन ने रहने के लिए गलत जगह चुना । सेवानिवृत्ति के बाद जो पैसा मिलेगा उससे शहर में घर लिया जा सकता था। लेकिन यह ढाई बीघा जमीन की बाउंडरी करने में ही सारे पैसे चले जाएंगे ।

इसके बाद से रमन हमसे दूर-दूर रहने लगा । हमलोग उससे ऑफिस में मिला करते थे और हंसी मजाक किया करते थे । मज़ाक का विषय उसका ढाई बीघा जमीन हुआ करता था । ओर इस तरह से वह मज़ाक की खुराक बन गया था ।

बहुत कोशिश करने के बाद, अंततः मैंने उत्तरपाड़ा में एक फ्लैट ले लिया । वहाँ स्कूल, कॉलेज, हस्पताल आदि सब पास में ही हैं । जो सुविधाएं कोलकाता में हैं वह सारी सुविधाएं यहाँ मौजूद हैं ।

अमिताभ ने भी न्यू टाउन में एक घर लिया । मैं एकबार वहाँ गया था लेकिन उधर अपनापन अपनापन नहीं दिखा ।

शिवनाथ की सेवानिवृत्ति का समय आ गया, हमलोगों ने सोचा कि उसे एक अच्छा सी फेयरवेल पार्टी दें । क्या किया जाये यह सोचते-सोचते रमन अचानक से बोल उठा "यह पार्टी मेरे जमीन पर हो तो कैसा रहेगा ?" हम सब ने कहा "सात समुंदर उस गाँव में ।" रमन ने

कहा "पिछले साल पंचायत ने उधर रास्ता बनवा दिया । मैंने वहाँ एक छोटा सा ताली का घर भी बना लिया । अभी वहाँ बिजली नहीं आया है । लेकिन वहाँ पेड़-पौधे होने के कारण गर्मी नहीं लगती है । सुबह जाकर शाम तक लौटने से लाइट की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी ।" तभी अमिताभ बोला "चलो तब देखकर ही आते हैं जमींदार रमन की जमींदारी ।"

रमन बहुत खुश हुआ, खुशी से उसके आँखों में आँसू भी आ गए । वह हमलोगों से बहुत प्यार जो करता था ।

तय दिन को हमलोग ट्रेन से निकल पड़ें । स्टेशन पर रमन पहले ही पहुँच गया था । उसने हमारे लिए एक गाड़ी भी ठीक की थी । हमलोग गाँव की तरफ चल दिये । वहाँ खेतों में हिलते हुए पीले-पीले सरसों के फूल और स्वच्छ हवा मन को आकर्षित रहा था । करीब आधे घंटे बाद, हमलोग रमन के जमीन पर पहुँच गए । वहाँ घर के सामने चटाई बिछाकर बैठने का इंतजाम किया गया । रमन ने कहा "यहाँ कुर्सी, डायनिंग टेबल आदि कुछ नहीं है । यहाँ तो टैप का पानी भी नहीं है, कुएँ के पानी से काम चलाना होगा ।" परमेश्वर ने कहा "हमे सब चीज की आदत है, दोस्त ।"

रमन का परिवार यहाँ नहीं रहता है । रमन अपना समय बिताने यहाँ कभी-कभी आता है । रघु नाम का एक व्यक्ति रमन की जमीन की देखभाल करता है । उन्ही के हाथ से बना पूरी- सब्जी, मिठाई और चाय पीकर हमलोग मुहल्ला देखने निकल पड़ें । मैंने देखा कि यहाँ रमन का केवल घर नहीं है । यहाँ तो हरे रंग का विशाल राज्य है । यहाँ रमन ने बहुत सारे फल वाले पेड़ लगा रखे थे जैसे - लीची, आम, कटहल, चीकू, नारियल, सुपारी । साथ ही साथ साल, शीशम, सागौन आदि जैसे बड़े-बड़े पेड़ लगा रखे थे । पश्चिम बंगाल में जो-जो फल मशहूर हैं लगभग वे सारे फल रमन ने लगा रखे हैं । रमन ने बताया कि उसने बड़े प्यार से इनकी सेवा की है । साथ ही कुछ-कुछ पेड़ों में फल भी आने शुरू हो गए थे । वहाँ का वातावरण काफी साफ- सुथरा था । जमीन के बगल में ही चांदी की रेखा जैसी बहती एक नदी भी थी ।

इतने में रघु हमलोगों को बाजार लेकर पहुँच गया और बाद में खाना बनाने में भी लग गया । रमन ने काफी अच्छी व्यवस्था की थी ।

खाना बनने ही वाला था कि हमलोग तब तक कुएँ के पानी से नहाने के लिए गए । हमलोगों ने नहाते समय काफी मजा किया मानो हमलोग दस वर्ष के बच्चे हैं । हमलोग एक दूसरे पर पानी फेक कर खूब खेलें । इसी बीच परमेश्वर ने कहा " मेरे बालीगंज फ्लैट में पानी की बहुत समस्या है । यहाँ तो पानी की कमी ही नहीं है । आज तो हमें अपना बचपन याद आ गया ।

दोपहर के समय हमलोगों ने मिट्टी के आँगन में बैठकर केले के पत्ते पर चावल, घी, बैंगन भाजी और माँस ग्रहण किया । शिवनाथ ने कहा "यह हमारे जीवन की सर्वश्रेष्ठ फेयरवेल पार्टी है ।" यह सुनकर रमन की आँखों में खुशी की चमक आ गयी ।

हमलोग अपने अपने खरीदे हुए आश्रय स्थल के बारे में सोचने लगें । शहरी जीवन में रोड, बाजार, बिल्डिंग्स, मॉल आदि के पीछे एक मानसिक अशांति छुपी है । फ्लैट की छोटी-छोटी खिड़कियों से बड़ी मुश्किल से आसमान का एक टुकड़ा दिखाई देता है । यहाँ नदी किनारे बैठकर खुले आसमान को देखना मन में एक अजीब शांति का एहसास दिलाता है ।

शाम होने वाली थी । गाड़ीवाला भी गाड़ी लेकर तैयार था । शाम के वक़्त चिड़ियाँ चहचहाते हुए अपने घोसलों में लौट रही थी । उनका चहकना हमारी विदाई संगीत जैसा प्रतीत हो रहा था ।

लौटते वक़्त हमने रमन से इस गाँव का नाम पूछा । रमन ने जवाब दिया "निश्चिंतपुर ।" सच में यह रहने के लिए निश्चिंत जगह है । चारों ओर हरियाली, ताजी हवा जिसमे ऑक्सिजन व्याप्त है । शिवनाथ ने कहा "सेवानिवृत्ति के बाद, कभी कभी यहाँ की ताजी हवा लेने आऊँगा ।" मैंने प्रस्ताव रखा कि यहाँ रमन का अपना एक तालाब भी होना चाहिए जिसमे मछली पाला जाए । हम सभी मित्र तालाब किनारे बैठकर सूर्यास्त का मजा ले सकते हैं ।

इतना सुनते ही रमन की आँखों में एक चमक आ गयी । रमन को भी यह प्रस्ताव अच्छा लगा । वह खुश था क्योंकि दोस्तों की उत्सुकता ने यह प्रमाणित कर दिया कि रमन यहाँ जमीन लेकर कोई गलत काम नहीं किया है ।

वापस आते वक़्त हमलोगों के मन में ख्याल आया कि सच में रमन एक परिपूर्ण इंसान है । शहरी जीवन में इंसान रहकर प्रदूषण, राजनीति, कूटनीति, भ्रष्टाचार आदि से घिरा होता है । एक दूसरे के प्रति कृत्रिम आचरण रखता है । आज रमन का जमीन, उस पर लगे पेड़ - पौधे, हरियाली, खुला आसमान, ताजी हवा आदि हमारे हृदय में बस चुका है । इंसान का बसेरा कहाँ होना चाहिए के संदर्भ में यह हमारे समक्ष एक सटीक उदाहरण है ।

तापसी आचार्य (बसाक)
सहायक लेखा अधिकारी

खूबसूरत यादें

उम्मीद रख प्यार किया है - मैंने,
कहा तो था कुछ ऐसा ही - तुने,
कायम तो पूरी दुनिया, उम्मीद पर,
तो कर लिया उम्मीद ।
खा ली कसमें,
महबूबा- तेरे साथ रहने की,
दिल के पास रहने की,
पास तो आज भी हूँ - तेरे
पर दिल कहीं दूर है - मेरा भी - तेरा भी,
शायद,
धड़कन को जो राग दी थी हमने
सुर खराब कर दिये हैं,
कुछ तुने - कुछ मैंने,
अब कुछ यादें ही बची है,
जो संजोयी थी साथ हमने ।
कुछ खट्टी - कुछ मीठी तेरी बातें,

रातों पर छत पर होने वाली मुलाकातें,
कभी ना भूलने वाली वो हसीन रातें,
जो बिताई हमने गंगा किनारे
याद आती हैं ।
बहुत याद आती है ये सारी यादें,
देख लेता किसी को आज भी,
गुलाबी कपड़ों में, खिड़कियों के सामने बाल संवारते,
थम सी जाती मेरी सांसें,
अब तो,
हँस - रो भी नहीं सकता मैं,
रोने को आँसू नहीं, आँखों में मेरे,
हँसी में याद आती तेरी ।
ना सोचा कभी,
कर दोगे ऐसे तन्हा मुझे,
कोई, बेवफा कहे तुझे,
आज भी मंजूर नहीं मुझे,

सोचता कभी मिटा दूँ,
यादों को तेरी ।
तुने मिटायी यादें जैसे मेरी,
पर यादों पर है जिसका - वश ।
इसी पर तो है, चलता इसी का - यश ।
तुझमे अब,
यही कहना है सोनिये,
जुड़ा हो के भी तू मुझमे कहीं बाकी है ।
बाकी है ।

राजेश कुमार
डी.ई.ओ.

कथादेश

हमारा देश कथा, कहानी, गल्प, आख्यान व किंवदंतियों का देश है। प्राचीन काल से ही कहानी कहने और सुनने की समृद्ध परंपरा रही है। हिन्दी कहानी लेखन की वर्तमान विधा भले ही 'एक टोकरी मिट्टी' से शुरू हुई मानी जाती हो, परंतु कथा शिल्प भारत की प्राचीन सभ्यता संस्कृति और लोक जीवन का अभिन्न अंग रहा है। कथाओं के माध्यम से मनुष्य के जीवन मर्म, राग-रंग तथा धर्म एवं दर्शन के गूढ रहस्यों को सुबोध एवं सरल ढंग से प्रस्तुत किया गया है। लोक जीवन की मान्यताएँ, तत्कालीन सामाजिक गठन, उनकी संस्कृति एवं विचारों की वाहक कथाएँ ही तो बनी हैं।

दादी-नानी की कहानियों में सीखने-समझने के लिए कितनी सारी चीजें होती हैं। ये कहानियाँ मनोरंजक होने के साथ-साथ नीतिपरक एवं ज्ञानवर्धक भी होती हैं। दादी-नानी भले ही निरक्षर अथवा अल्प-शिक्षित हों परंतु उनकी कहानियाँ ऐसी सीख दे जाती हैं जो जीवन पर्यन्त सद्पथ पर चलने की प्रेरणास्रोत बनती हैं। इन कहनियों में कल्पनाशीलता, हास्य, चरित्र-चित्रण, शिक्षा तथा नैतिक मूल्य सभी का समावेश होता है। 'लालच बुरी बला है' जैसी नीति सम्मत शिक्षा पशु, राक्षस, भूत आदि पात्रों से बुनी एक ऐसी रोचक कथा के माध्यम से दी जाती है, जिसे सुनने वाला बच्चा इस पाठ को कभी नहीं भूलता।

नीति कथाओं में विष्णु शर्मा के पंचतंत्र और बुद्ध की जातक कथाओं का उल्लेख करना भी समीचीन प्रतीत होता है। धूर्त सियार अपनी दुष्ट नीति और चालाकी के कारण अंततः पछताता है। कौवा अपनी सहज बुद्धि के प्रयोग से पानी पीने मे सफल होता है। घमंडी खरगोश मंद चाल चलने वाले कछुए से हार जाता है, क्योंकि कछुआ निरंतर प्रयास करना नहीं छोड़ता । किसान के झगड़ालू बेटे एक-एक लकड़ी आसानी से तोड़ने मे सफल तो हो जाते हैं, परंतु लकड़ी की गठरी को एक साथ नहीं तोड़ पाते, और एकता के बल से अवगत होते हैं। इन कथाओं में न तो भाषाई चमत्कार की आवश्यकता पड़ती है और न ही साहित्यिक रुचिबोध की। अविरल निर्मल जल की भांति ये कहानियाँ अपनी स्वाभाविक गति से पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ती हैं।

धर्म एवं आस्था की जडों में भी कई कथाएँ समाई हैं। महाभारत,रामायण पुराण आदि धर्मग्रंथों में ज्ञान का विपुल भंडार है। इन धर्मग्रंथों में कथाओं की लंबी शृंखला है।

इन धर्मग्रंथों में एक ओर जहाँ विद्वान परम सत्य, जीवन तत्व तथा दर्शन की खोज करते हैं, वहीं इनके कथासार बच्चों के सहज बोध के अनुरूप रोचक भी हैं ।

लोक कथाओं मे भूत, जिन्न, राक्षस जैसे पात्रों का भी स्थान है। कहानियों में इनकी उपस्थिति केवल मनोरंजन के उद्देश्य से होती है, विकृत भय सृष्टि करने क लिए नहीं । आजकल सिनेमा एवं टेलीविजन में तकनीक व साउंड इफेक्ट के माध्यम से भूत-प्रेत की भयावह छवि दी गई है। गोयाकि सिनेमा निर्देशन का उद्देश्य दर्शकों को स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करना नहीं बल्कि उन्हे केवल डराना हो। दर्शक भी रुचिबोध के अभाव में पैसे से डर खरीदते हैं। विशेषकर बच्चों की मानसिकता पर ऐसी फिल्मों का दुष्प्रभाव पड़ता है। शोधकर्ता बताते हैं कि टी.वी. देखने अथवा सिनेमा देखने से बच्चों की कल्पनाशीलता प्रभावित होती है । क्योंकि दृश्य को साक्षात देखने पर मस्तिष्क को कल्पना करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है । दूसरी ओर कहानी पढ़ने अथवा सुनने पर मस्तिष्क को मानस पटल पर एक चित्र ऑकने का अवसर मिलता है, जिससे कल्पनाशीलता प्रबल होती है।

हमारे समाज की लोक कथाओं में तिलस्मी ऐस्टोरी एवं रूप कथाएँ भी भरी पड़ी हैं। ये कहानियाँ बच्चों को अधिक कल्पनाशील एवं जिज्ञासु बनने में सहायक हैं। सफ़ेद घोड़े पर सवार, सुदूर देश का राजकुमार दुर्गम घने जंगल में खो जाता है। राजकुमार को एक पेड़ के नीचे नींद आ जाती है। मध्य रात्रि में जब उसकी आँखें खुलती हैं तो एक पेड़ की ओट से देखता है कि नीरव वन में निस्तब्ध मौन खड़े पेड़ों पर चाँदनी छिटकी है। कुछ परियाँ रेशमी वस्त्र पहने सरोवर तट पर नृत्य कर रही हैं। जीवन का कोलाहल, पढ़ाई का तनाव, प्रकृति से दूर शहरी जीवन की तेज़ धूप में ये कहानियाँ ठंडी छाँव-सी हैं, जहाँ बच्चों की स्वस्थ रचनात्मक कल्पनाएँ आश्रय पातीं हैं।

लोक कथाओं में कुछ अमर चरित्र हैं जिनकी अदृशय उपस्थिति सदैव पाठकों के आस-पास बनी रहती है। गोनु ओझा, तेनालीरामन, विक्रम-बेताल, अकबर-बीरबल, बंगाल में गोपाल भांड आदि चरित्र ऐसे ही कुछ उदाहरण हैं। इनकी कथाओं में दर्शाया गया है कि मनुष्य कैसे अपनी बुद्धि बल से विकट परिस्थितियों से उबरने में सक्षम हो सकता है । ये कथाऍ रोचक होने के साथ-साथ बुद्धि बल के महत्व को भी बताती है ।

एक अन्य तथ्य यह भी है इस सदी के बच्चे कथाओं से दूर होते जा रहे हैं। टेलीविजन, मोबाइल फोन, कंप्यूटर आदि ने जहाँ कहानियों को सुलभ बनाया है वहीं इन

चीजों ने बच्चों की अभिरुचि को भी प्रभावित किया है। अधिकांश बच्चे मनोरंजन के लिए कहानियों की किताबें पढ़ने के बजाय टेलीविजन देखना या मोबाइल पर गेम खेलना पसंद करते हैं। टेलीविजन भी मनोरंजन का अच्छा साधन है परंतु जैसा कि पहले ही कहा गया है कि पढ़ने तथा सुनने से रचनात्मकता में वृद्धि होती है और कल्पनाशीलता पुष्ट होती है। अतः बच्चों का अधिक समय मोबाइल और टेलीविजन पर व्यतीत होना उनके समग्र विकास में बाधक सिद्ध हो सकता है।

वर्तमान समय में केवल बच्चे ही नहीं वयस्कों की भी पठन अभिरुचि प्रभावित हुई है। बस या ट्रेन में सफर के दौरान कभी-कभार ही किसी के हाथ मे पत्रिका या किताब दिखती है। हाँ मोबाइल प्रत्येक हाथ में ज़रूर दिख जाएंगी।

साहित्य के समानांतर हमारे देश में कथा कहने की लोक विधा है । ये कथाकार अनाम होकर भी पीढ़ी दर -पीढ़ी से हमारे बीच मौजूद हैं । इन कथाओं ने प्राय: हर साहित्यिक विधा को स्पर्श किया है । भारत की वैविध्यपूर्ण संस्कृति लोक भाषा, लोकाचार विश्वास, मान्यताएँ इन्ही कथाओं मे जीवित हैं। ये कथाएँ ऐसे अदृश्य तार हैं जिसके माध्यम से हमारे पूर्वजों के जीवन-दर्शन, उनके अनुभव, उनके दृष्टिकोण तथा उनकी आस्था हम तक पहुँचते हैं। पुनःश्च हमारा देश कथाओं का देश है। ये कथाएँ हमारी ऐसी धरोहर है, जो हमें तथा आने वाली पीढ़ी को संवारेगी। यह निधि कहीं खो ना जाए, हमें इसे संभालना है।

चंदन कुमार बढ़ई
हिंदी अधिकारी

वैदेही

आज करना है, आज करना ही है,
वैदेही को इस अग्नि परीक्षा से निकालना ही है।
कल की बात थी कि उससे पूछा गया,
कौन था वो दुस्साहसी जो तुम्हें छू गया।
क्या कहती वो, कैसे कहती,
चुप रहकर अपना दर्द वह सहती।
था कहने को बहुत कुछ, पर कहना न चाहती थी,
उस दर्द को, उस दुख को वह चुपचाप सहना चाहती थी।
था वो बचपन से पहचाना चेहरा,
प्यारी बिटिया, दुलारी बिटिया उसे कहता।
न समझी वो उसके उस प्यार का मतलब,
घात लगाए मौके की तलाश में था वह तब।
एक दिन उसने मौका पा ही लिया,
देख अकेली बिटिया को बहला ही लिया।
वह अबोध उसकी बातों में आ गयी,
बिना कुछ सोचे उसका कहा मान गयी।
आज फिर उस 'अपने' ने वही रूप दिखाया।
वैदेही ने समझा और खुद को बचाया।
सिसकते - सिसकते उसने आपबीती बताई,
उस 'अपने' 'से अपनों की पहचान कराई।
सभी दंग थे, सभी शर्मिंदा,
उस 'अपने' के करतूत की करते निंदा।
पर अब निंदा भर से क्या होगा?
वैदेही के सम्मान के लिए संग्राम होगा।
वैदेही सिर्फ 'शरीर' नहीं, उसकी भी एक गरिमा है,
पुरुष के अधिकार की भी अपनी एक सीमा है।
इस गरिमा - सीमा का द्वंद्व समाप्त हो,
वैदेही को उसका सम्मान प्राप्त हो।

प्रियंका संजीव सिंह
कनिष्ठ अनुवादक

संघर्ष से सफलता तक

रंग सांवला था उनका, पर चेहरे पे तेज़ ऐसा, जैसे कोई रानी हो। देखते ही मंत्रमुग्ध हो जाने वाला तेज़। बात करीब 17-18 साल पुरानी है। मैं करीब 6-7 साल की थी, जब मैंने उनको पहली बार देखा था। उनकी पहली झलक मुझे आज भी याद है। गाँव में हमारे पड़ोस में ब्याह कर आईं थी वो। हमारे मोहल्ले में घर इतने आस-पास होते हैं कि पता ही नहीं चलता कि शादी किसके घर पर है क्योंकि जश्न का माहौल चारों ओर देखने को मिलता है। शादी उनके घर पर थी लेकिन मोज तो हम बच्चों की थी। स्कूल जाने का मन भी नहीं करता था। ज़बरदस्ती स्कूल जाते थे और स्कूल में भी दिन भर शादी की ही बातें किया करतें थे। घर आ कर बस्ता रखते ही सीधे उनके घर जाकर धमाचौकड़ी मचाने लगते थे। पहले शादियों का कार्यक्रम भी दस दिनों तक चलता था। नयी दुल्हन को देखने के लिए होड़ मची रहती थी, जैसे कोई नायाब, कीमती चीज़ हो जिसे देखने भर से खुशी मिल जाती थी। भाभी दिखने में काफी सुंदर थी लेकिन कहीं न कहीं उनके चेहरे पर खामोशी दिखाई पड़ती थी। हो सकता है वह शांत स्वभाव की हो या फिर नयी जगह आकर थोड़ी डरी हुई हो।

धीरे-धीरे समय बीतता गया और मैं अपने स्कूल और ट्यूशन में व्यस्त हो गई। हर शाम हम बच्चें अपनी गली में खेला करते थे। कभी छुआ-छुई, कभी विष-अमृत, तो कभी लुका-छुपी। एक दिन लुका छुपी-खेलते समय मैं भाभी के घर के बगल की गली में जा छुपी। मुझे छुपा देख भाभी ने मुझे बुलाया, पहले मैं थोड़ा सकुचाई लेकिन फिर उनके पास चली गई। उन्होनें मुझसे मेरा नाम, मैं किस वर्ग में पढ़ती हूँ, क्या-क्या पढ़ती हूँ ये सारी बातें पूछी। मैने भी उनकी सभी बातों का जबाब दे दिया । तब-तक मेरे दोस्त मुझे पुकारने लगे । मैंने भाभी को बाय किया ओर दौड़ते हुए अपने दोस्तों के पास जाने लगी। जाते-जाते भाभी ने मुझे दोबारा आने के लिए बोला। उस दिन के बाद से मैं रोज़ उनसे मिलने जाने लगी। इतने कम दिनों में हम काफी घुल-मिल गए थे। भाभी हमेशा मुझसे कहा करती थी कि अच्छे से पढ़ाई करो। पढ़ाई कभी मत छोड़ना चाहे ज़िंदगी में कैसे भी हालात हों। मुझे उनकी बातें कभी समझ में नहीं आती थी लेकिन फिर भी मैं उनकी हाँ में हाँ मिला देती थी। कुछ समय बीत जाने के बाद मुझे पता चला कि उनकी शादी ज़बरदस्ती करवाई गई थी। उन्हें आगे और पढ़ना था लेकिन उनके पिताजी ने लड़की को पढ़ाने के बजाय लड़के को पढ़ाना बेहतर समझा और उनकी पढ़ाई छुड़वाकर शादी करवा दी। उन्होने मुझसे कहा कि वो एक शिक्षिका बनना चाहती थी, लेकिन पिताजी की आर्थिक

स्थिति इतनी मजबूत नहीं थी कि दोनों बच्चों की पढ़ाई का खर्च वहन कर सकें। उस दिन ये बातें भैया ने सुन ली। जब हमने भैया को अपने सामने खड़े पाया तो हम काफी डर गये क्योंकि भैया का स्वभाव काफी कठोर था। मैंने कभी उनसे बात भी नहीं की थी। मैं वहाँ से चुप-चाप निकल गई लेकिन मुझे इस बात का डर था कि कहीं भैया भाभी को डांट न दें। 3-4 दिनों तक मैं भाभी से नहीं मिल पायी और ना ही मुझे पता चल पाया कि आखिर उस दिन मेरे जाने के बाद क्या हुआ। एक दिन जब भैया घर पर नहीं थे तो मौका पाकर मैं भाभी के घर गयी। उस दिन उनका चेहरा काफी अलग सा दिखाई पड़ रहा था। उनकी आँखों में एक चमक थी। मुझे देखते ही उन्होने मुझे गले लगा लिया और कहने लगी अब मेरा भी सपना पूरा होगा, अब मैं भी पढ़ पाऊँगी। भैया ने मुझे आगे पढ़ने की इजाजत दे दी है। आज शाम ये माँ-बाबूजी से बात करेंगे मेरी पढ़ाई को लेकर। ये सारी बातें सुनकर मुझे भी काफी प्रसन्नता हुई। उस दिन के बाद से मेरी नज़रों में भैया के लिए इज्ज़त काफी बढ़ गयी। भैया के इतने कठोर व्यक्तित्व के पीछे इतना कोमल हृदय छिपा है किसे पता था? इस पितृसत्तात्मक समाज में भी भैया अपनी पत्नी के अधिकारों के बारे में सोच रहें थे।

खैर, शाम हुई और ये बातें उनके परिवार के बुजुर्गों के सामने रखी गई। बड़ों ने बिना कुछ सोचे समझे एक सिरे से इस फैसले को नकार दिया।भाभी की सारी उम्मीदों पर पानी फिर गया। वो फिर से मायूस हो गयी। लेकिन भैया ने हार नहीं मानी। उन्होंने अपने माता-पिता को मनाने की बहुत कोशिश की, लेकिन इसका कोई फल नहीं निकला।

एक दिन भैया जब काम से घर लौटे तो उनके बैग से एक लिफाफा भी निकला। ये लिफाफा कुछ और नहीं बल्कि भाभी के कॉलेज का आवेदन-फार्म था। भैया ने माता-पिता से बिना पूछे ही आवेदन-फार्म खरीद लिया था। उन्होंने भाभी को पढ़ाना सही समझा। फार्म भरकर जमा कर दिया गया और भाभी का दाख़िला कॉलेज में हो गया। कॉलेज जाने की तिथि पास आती जा रही थी लेकिन माँ-पिताजी को इस बारे में कोई जानकारी नहीं थी। वे इस सच्चाई को स्वीकार नहीं कर सकतें थे कि उनकी बहू बाहर जाकर पढ़े या नौकरी करे।

देखते-देखते वह दिन भी आ गया। भैया ने भाभी को पूरी तैयारी कर लेने को कहा। कभी मंदिर जाने के बहाने, कभी बाहर खाना खाने के बहाने तो कभी सिनेमा देखने के बहाने भाभी रोज़ कॉलेज जाने लगी। सब ठीक-ठाक चल रहा था कि एक दिन अचानक

काम से वापस लौटते समय भैया की बाइक लड़खड़ा गयी ओर वे नीचे गिर पड़े, उनके पैर की एक हड्डी टूट गयी। डॉक्टर ने उन्हें डेढ़ महीने आराम करने ही हिदायत दी। भाभी सब पढ़ाई-लिखाई छोड़ दिन-रात भैया की सेवा में लग गयी। उनकी सेवा देख माँ-पिताजी काफी प्रसन्न हुए। भाभी की पढ़ाई का काफी नुकसान हो रहा था। भैया ने उन्हें कॉलेज फिर से शुरू करने को कहा। लेकिन भाभी नहीं मानी। वह बोली कि मैं आपको इस हालत में छोड़ कर कहीं नहीं जाऊँगी। भैया ने कहा अब उनकी हालत में काफी सुधार हो गया है, अब वे खुद से भी हल्का फुल्का काम कर सकते हैं। तुम अपनी पढ़ाई फिर से शुरू करो। भैया के काफी समझने के बाद भाभी राज़ी हो गयी। लेकिन घर पर क्या बोले ये भी एक समस्या थी। भैया ने सुझाव दिया की बोल देना की मेरी लंबी उम्र के लिए तुमने रोज़ मंदिर जाने की मन्नत मांगी है। इस बात पर कोई तुम्हें मना नहीं कर पाएगा। भाभी ने ऐसा ही किया और फिर से पढ़ाई शुरू कर दी।

घर से निकलने के कुछ दूर बाद भाभी रिक्शा कर लेती थी। 15 दिनों तक सब ठीक-ठाक रहा। एक दिन जब भाभी कॉलेज पहुंची तो कॉलेज की गेट पर अपनी सासू माँ को खड़ा पाया। दोनों ने एक दूसरे को एक टक देखा । सासू माँ ने बिना कुछ बोले बहू का हाथ पकड़ा और एक रिक्शा लेकर घर वापस लौट आ गई। रास्ते में भी किसी ने कुछ नहीं बोला। घर पहुँचते ही वे भाभी पर बरस पड़ी। वे कहने लगी कि" ये हम सब से छुप-छुप कर कॉलेज जाती है। किसी की कोई इज्ज़त नहीं करती है। यही सिखाया है इसके माँ-बाप ने की बड़ों का कहना मत मानों, जो मन में आए वो करो। मुझे काफी दिनों से शक हो रहा था कि रोज़ एक ही समय ये बैग लेकर कहाँ जाती है? माँ-बाप ने अपनी मुसीबत हमारे सिर पर डाल दी है।“ इतना सुनने के बाद भैया से रहा नहीं गया और वे बोल उठे कि जो कहना है मुझसे कहो, इसमे इसकी कोई गलती नहीं है। इसे पढ़ने की इजाजत मैंने दी है। अपने बेटे की बातें सुनकर माँ का पारा सातवें आसमान पर पहुँच गया था। वो चिल्ला-चिल्ला कर बोलने लगी, पता नहीं मेरे बेटे को क्या सिखा-पढ़ा दिया है इसने, आज मेरे सामने इसकी ज़ुबान चल रही है। उनकी आवाज़ इतनी तीव्र थी कि अगल-बगल के घरों में भी लोग सुन पा रहें थे। जब मैं स्कूल से घर वापस आई तो मम्मी-पापा को बात करते सुना की आज शर्मा जी के घर काफी झगड़ा हुआ है। उन्होंने अपनी बहू को काफी खरी-खोटी सुनाई है। मैं समझ गयी कि हो ना हो उनकी पढ़ाई के बारे में घरवालों को पता चल गया होगा। उस दिन के बाद से भैया को उनके माँ-बाप ने पराया मान लिया था। वो लोग घर में एक साथ तो रहते थे लेकिन कोई किसी से बात नहीं करता था।

रिश्तों में दरारें आ गयी थी। लेकिन इतना होने के बाद भी भैया ने भाभी की पढ़ाई जारी रखी। भाभी भी पूरी ईमानदारी से एक के बाद एक परीक्षाएँ पास करती गयी। स्नातक की फ़ाइनल परीक्षा में भाभी ने पूरी यूनिवर्सिटी में टॉप किया। पूरे मोहल्ले में ये बात फैल गयी । भाभी की तस्वीर भी स्थानीय अखबार में छपी थी। सभी लोग बधाई देने उनके घर जाने लगे। भाभी के साथ-साथ उनके सास-ससुर की भी काफी वाहवाही हुई। आज के जमाने में भी ऐसे महान लोग हैं जो बहू को बेटी की तरह मानते हैं और उसकी खुशी के लिए उसकी इच्छाओं का सम्मान करते हैं। सभी के चले जाने के बाद सासू माँ भाभी के पास आई। उन्हें अपनी गलती का एहसास हो चुका था। उन्होनें अपनी बहू को गले से लगा लिया और अपने बुरे बर्ताव के लिए उनसे माफी मांगी। भाभी ने कहा की माँ-बाप माफी मांगते अच्छे नहीं लगते। उसके बाद भाभी ने कभी पीछे मुड़ कर नहीं देखा। स्नातक के बाद स्नातकोत्तर फिर पी.एच.डी. में भी अव्वल नम्बरों से पास हुई। एक के बाद एक अपने परिवार की मर्यादा में चार-चाँद लगाती रही। आज वे एक प्रतिष्ठित महाविद्यालय में बतौर प्रोफेसर नियुक्त हैं। वे एक सफल शिक्षिका, एक आदर्श बहू, एक गौरवान्वित पत्नी और एक ममता से भरी माँ का किरदार बखूबी निभा रही हैं। आज इतने वर्षों के बाद भी वह अपनी सफलता का श्रेय अपने पति को देना नहीं भूलती। जिन्होंने सही समय पर सही फैसला लेकर एक स्त्री की ज़िंदगी को मायने दिया।

आस्था गुप्ता

लेखाकार

दौड़

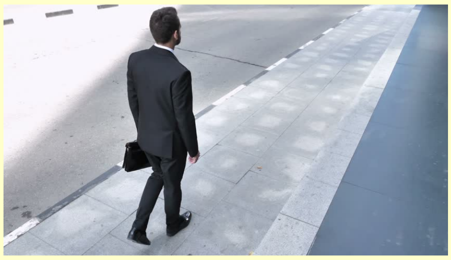

सुबह सूरज की पहली किरण के साथ
दौड़ पड़ती है जिंदगी
आधा-अधूरा कुछ खाए हुए
दुनिया की भीड़ को चीरते हुए
मंजिल तक पहुँचने की ललक

याद दिला जाती है
बेपरवाही, घर का आराम
चैन की नींद और
प्यार से खिलाया गया मनपसंद खाना ।

पर अब इससे अलग
परिवार से दूर
एक अलग ही दुनिया में बीत रही है जिंदगी
परायों के बीच अपनेपन को ढूँढ़ते
सुबह को शाम करते
फाइलों के बीच उलझा
एक और दिन कट जाने का चैन

कुछ है जो अंदर बुझता जाता है
निराशा, अकेलापन, तनाव
पर इस सबके बीच एक जिजीविषा चलाए रखती है
परिवार को मिले हर सुख, हर आराम
थके-हारे इंसान को फिर से उठाती है जिम्मेदारियाँ
हर सुबह के साथ, उसी दौड़ के लिए ।

जितेन्द्र शर्मा
वरिष्ठ लेखाकार

दीप प्रज्वलन कर हिन्दी दिवस कार्यक्रम का शुभारंभ करते प्रधान महालेखाकार महोदया

हिन्दी दिवस के अवसर पर माननीय गृह मंत्री के संदेश का पाठ करते हुए उपमहालेखाकार (प्रशासन) श्री गौतम अल्लादा

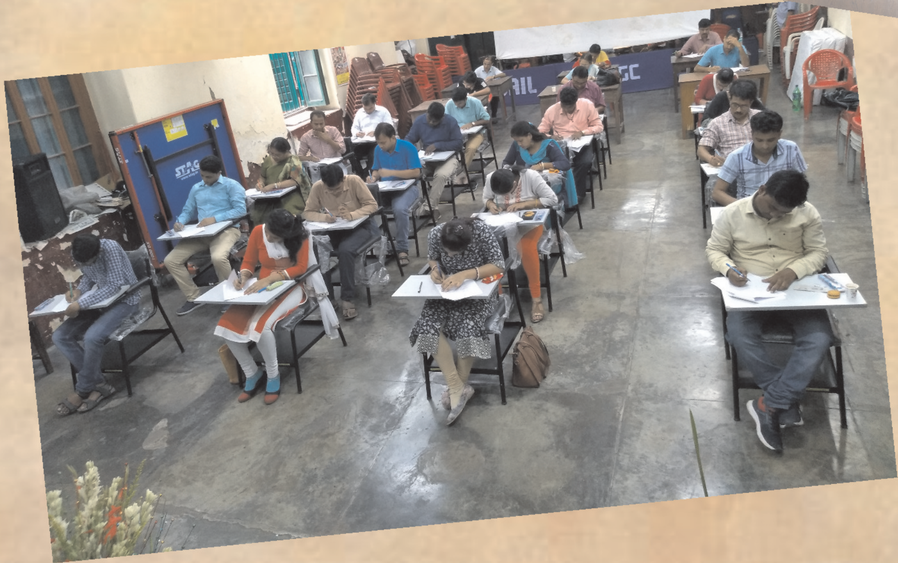

हिन्दी पखवाड़ा – 2018 के अवसर पर आयोजित प्रतियोगिता में भाग लेते हुए प्रतिभागी

हिन्दी पखवाड़ा – 2018 के अवसर पर राजभाषा मित्र (नकद) पुरस्कार विजेता को पुरस्कार प्रदान करते हुए उपमहालेखाकार (प्रशासन) श्री गौतम अल्लादा

हिन्दी दिवस – 2018 की एक झलक

हिन्दी - एक व्यवहार (एकाँकी)

पात्र परिचय

1. **कामता प्रसाद :** आयु 65 वर्ष, सेवानिवृत्त शिक्षक ।
2. **कोमल :** कामता प्रसाद की पत्नी, आयु 61 वर्ष ।
3. **सपना :** कामता प्रसाद की बेटी, आयु 23 वर्ष ।
4. **दीनानाथ :** कामता प्रसाद के मित्र, आयु 58 वर्ष ।
5. (**शंभू, भूषण, त्रिलोकी एवं शंकर** : कामता प्रसाद के अन्य मित्र) ।

दृश्य- पहला

[एक घर का हॉल जिसमें एक हरे रंग के सोफ़े के साथ चार कुर्सियाँ रखी हुई हैं और बीच मे एक टेबल रखा है । जिस पर एक हिन्दी अखबार रखा हुआ है । हॉल में चार दरवाजे खुलते हैं जो अलग अलग कमरों के हैं । यह घर श्री कामता प्रसाद का है । ये हिन्दी के शिक्षक थे जो कुछ वर्ष पहले सेवानिवृत्त हुए है । वहीं सोफ़े पर कामता प्रसाद हिन्दी का अखबार पढ़ रहे हैं ।]

कामता प्रसाद : *(अखबार पढ़ते हुए)* अखबार तो हिन्दी का है पर ज़्यादातर विज्ञापन अँग्रेजी के हैं ।

(कोमल चाय लेकर आती है ।)

कोमल : *(चाय देते हुए)* आप तो अँग्रेजी के पीछे हाथ धोकर पड़े रहते हैं ।

कामता : पीछे पड़ने की बात नहीं है, कोमल । हमारी पहचान हिन्दी से है । यह भारत की गरिमा है । फिर भी इसकी महत्ता कम होती जा रही है और अँग्रेजी रेत की भांति फैलती जा रही है ।

कोमल : आपकी गरिमा, रेत आदि मेरे पल्ले नहीं पड़ती । किचन में बहुत काम है, आपने बताया था कि आपके मित्र दीनानाथ जी और त्रिलोकी जी आने वाले हैं । इसलिए आज खाने की मेन्यू में चेंज की हूँ, बनाने में तो थोड़ा टाइम लगेगा ही हसबेंड जी । *(दीवार पर टंगी घड़ी को देखते हुए)* ओह माई गॉड ! 9 बज गए, वे 11 बजे आएंगे ना, मैं जाती हूँ, कुछ जरूरत पड़े तो आवाज लगाना ।

कामता : क्या बोली मेन्यू चेंज । वाह ! तुम भी हिन्दी में अँग्रेजी का प्रवेश कर ही देती हो, बिल्कुल इस अखबार की तरह ।

(कोमल हँसते हुए रसोई घर में चली जाती है)

(इसी बीच सपना का प्रवेश- वह चाय पीते-पीते आती है)

सपना : गुड मॉर्निंग डैड ।

कामता : सुप्रभात बेटी । तुम्हें कितनी बार बोला है मुझसे बात करते समय अँग्रेजी शब्दों का प्रयोग मत किया करो । अंग्रेजों के निकल जाने के बाद भी उसकी महक इस भाषा से बीते दिनों की बात याद दिला जाती है ।

सपना : ओह डैड ! जस्ट चील, इट्स ए क्लास एंड कूल फ़ैशन ।

कामता : हद है, तुम्हारा क्लासी फ़ैशन ।

(इसी बीच दरवाजे पर दस्तक होती है ।)

कामता : सपना जाकर दरवाजा खोल दो । अगर दीनानाथ और त्रिलोकी भाई होंगे तो मेरे पास लेकर आना ।

सपना : ओके डैड ।

(अँग्रेजी सुनकर गुस्से से सपना के तरफ देखते हैं।)

(सपना दरवाजा खोलती है एवं दीनानाथ का प्रवेश)

सपना : नमस्ते अंकल, पापा आपलोगों की ही प्रतीक्षा कर रहे थे । आइये इधर चलिए ।

(दीनानाथ एवं त्रिलोकी सोफ़े पर बैठते हैं)

दीनानाथ : और कहिए कामता जी कैसे हैं ?

कामता : बस सब ठीक है, मित्र अपना हाल बताओ ।

दीनानाथ : सब बढ़िया है, दोस्त ।

(इसी बीच कोमल चाय- नास्ता लेकर आती है)

(त्रिलोकी और दीनानाथ दोनों एक साथ - नमस्ते कोमल भाभी)

त्रिलोकी : *(चाय नाश्ता देखते ही)* भाभीजी के हाथ के बने आलू-पकोड़े का जवाब नहीं, *(पकोड़ा खाते हुए)* मैं तो इसी के इंतजार में रहता हूँ ।

(सभी हँसते हैं, कोमल रसोई की तरफ चली जाती है ।)

दीनानाथ : *(चाय पीते हुए)* एक समस्या है, मित्र ।

कामता : *(आश्चर्य से)* समस्या ?

दीनानाथ : हाँ, मेरे पोते का नामांकन अँग्रेजी विद्यालय में हुआ है, आपको तो पता ही है।

कामता : हाँ, आपने तो बताया ही था।

दीनानाथ : उस विद्यालय की शिक्षा प्रणाली काफी विचित्र है । बच्चों को परियोजना कार्य दिया जाता है । परंतु जब बात हिन्दी विषय की आती है, तो परियोजना कार्य के नाम पर साधारण सा निबंध दिया जाता है । इसमें व्यापकता का प्रवेश किया जा सकता है । इसके साथ ही विदयालय परिसर में हिन्दी न बोलने का तुगलकी फरमान भी सुनाया गया है । बच्चों को आपस में अँग्रेजी में ही वार्तालाप करना है ।

कामता : यह तो बहुत ही गंभीर समस्या है । हमें बाकी विषयों से मतभेद नहीं है परंतु हिन्दी को अनदेखा करना, हिन्दी का अपमान है ।

त्रिलोकी : *(सभी पकोड़े गटक जाने के बाद)* दीनानाथ भाई, यह समस्या अत्यंत ही संवेदनशील है, इस संबंध में एक बैठक का आयोजन किया जाना चाहिए । सभी मित्रों को एकत्रित होकर इस मसले का हल निकालना होगा ।

कामता : हाँ त्रिलोकी भाई आपका विचार उत्तम है, दीनानाथ भाई कल सुबह पार्क में इस बैठक का आयोजन किया जा सकता है । सभी मित्र तो सुबह पार्क में पहुँचते ही हैं ।

दीनानाथ : हाँ, यह अच्छा उपाय है, ठीक है कामता भाई हमलोग चलते हैं । कल सुबह पार्क में मुलाक़ात होती है ।

(दीनानाथ एवं त्रिलोकी जाते हैं।)

<u>दृश्य - दूसरा</u>

(सुबह के छह बज रहे हैं । कामता, दीनानाथ, शंभू, भूषण, त्रिलोकी एवं शंकर पार्क में लगे कुर्सियों पर विराजमान हैं ।)

दीनानाथ : मित्रों आपलोग जानते हैं कि आजकल अँग्रेजी विद्यालयों में हिन्दी को अनदेखा किया जाता है । ऐसे-ऐसे फरमान सुनाये जाते हैं जिससे हिन्दी को नीचा दिखाया जाता है । अँग्रेजी में लंबे-लंबे परियोजना कार्य थोपे जाते हैं एवं हिन्दी को वहाँ भी बौना बनाया जाता है । कुछ अँग्रेजी विद्यालयों द्वारा बच्चों को विद्यालय परिसर में अँग्रेजी में वार्तालाप करना अनिवार्य किया गया है ।

त्रिलोकी : इन समस्याओं का हल केवल सरकारी हिन्दी विद्यालयों में मौजूद है ।

भूषण : बात तो सही है, परंतु सरकारी विद्यालयों की स्थिति से आप सब भलीभाँति परिचित हैं ।

कामता : एक ही उपाय सूझ रहा है । हमें अपने क्षेत्र के विधायक जो अभी राज्य के शिक्षा मंत्री भी हैं को अपने उत्क्रमित उच्च विद्यालय को आदर्श विद्यालय करने हेतु पत्र लिखना चाहिए, साथ ही साथ उनके समक्ष अपनी समस्याओं को भी रखना चाहिए ।

शंभु : वाह कामता जी, आपका सुझाव तो काफी बढ़िया है । प्रशिक्षित शिक्षक, पुस्तकालय, लैब आदि गर विद्यालयों में उपलब्ध हो तो हमें अँग्रेजी प्राइवेट विद्यालयों के तरफ रुख नहीं करना पड़ेगा ।

दीनानाथ : भाइयों, हिन्दी को संरक्षित करना हमारा कर्तव्य है । सभी अभिभावक अगर अपने बच्चों का नामांकन सरकारी हिन्दी विद्यालयों में करवाने लगें तो ये बड़े पैसे ऐंठने वाले प्राइवेट अँग्रेजी विद्यालय औंधे मुंह गिर जाएंगे । जब तक हम सभी सतर्क एवं जागरूक नहीं होंगे, तब तक सरकारी विद्यालयों की स्थिति में सुधार संभव नहीं होगा । जब जनता सरकारी विद्यालयों के प्रति रुचि दिखाएंगी तब निश्चित ही इस क्षेत्र में विकास उत्पन्न होंगे ।

कामता : इस तरह से हम अपनी हिन्दी को संरक्षित करने में सफल हो पाएंगे तथा अँग्रेजी विद्यालयों में लगने वाली मोटी फीस से भी खुद को संरक्षित कर पाएंगे ।

शंकर : *(दोनों हाथ ऊपर उठाकर)* हाँ, सही बात है ।

(सभी एक साथ हँसते हैं और पर्दा गिरता है ।)

सन्नी कुमार
कनिष्ठ अनुवादक

वक़्त

वक़्त ठहरता कहाँ है ?
यह तो बस चलता जाता है
अपने रास्तों पर ।
किसी की खुशियों से अनजाना
किसी के गम से बेगाना ।
वक़्त किसी की सुनता कहाँ है ?
कि कोई चीख-चीख कर
तुझसे कह रहा है
ऐ बेरहम वक़्त !
दो पल के लिए ठहर तो जा
जरा पीछे मुड़ कर देख तो ले
कि तेरे साथ ही साथ
किसी का सब कुछ जा रहा है ।
पर वक़्त मुड़ता कहाँ है ?
कोई गिड़गिड़ाता है घुटने टेक कर
वक़्त के सामने
कि थोड़ा और जी लेने दे मुझे
ये जीवन के खूबसूरत लम्हें ।
कि कुछ और दिवालियों के
दीये जला लेने दे ।
पर ऐसा जीवन

ये वक़्त जीने कहाँ देता है ?
वहीं कही कोई मन की जुबान
ये भी कह उठती है -
जीना नहीं अब और मुझे
काँटो भरी जिंदगी से
मौत ज्यादा अपनी लगने लगी है ...।
पर ये वक़्त
मरने देता कहाँ है ?

आरती शर्मा
एम.टी.एस

संवेदना

जया मेट्रो स्टेशन पर जमी भीड़ को देखकर हतप्रभ हो गई । प्लेटफॉर्म पर खड़े होने तक की जगह नहीं थी । सभी के चेहरे पर बेचैनी, निराशा और घुटन की रेखाएँ खींची थी । कई ट्रेने रद्द की गई थी । मेट्रो परिचालन ठप्प पड़ा था । “आज मेट्रो ट्रेन में कोई गड़बड़ी आ गई है क्या ?”- जया ने एक अपरिचित महिला से पूछा । महिला बुरा-सा मुँह बनाकर बोली - “अरे किसी नवयुवक ने ट्रैक पर कूद कर आत्महत्या कर ली है । इसलिए मेट्रो परिचालन एक घंटे से बंद पड़ा है । ट्रेन चालू होने में घंटो लगेंगे ।“

जया बस कहने ही जा रही थी कि आत्महत्या करना पाप है । अनमोल जीवन ईश्वर का वरदान है । इसे सहेजना चाहिए । पर ये बातें वह कह नहीं पाई । वह महिला बोल उठी “खुद तो मर गया । अब हमें उसके लिए परेशानी झेलनी पड़ रही है ।“

एक अन्य सहयात्री ने उसके सुर ने सुर मिलाया, “ये सुसाइड करने वाले पता नहीं क्यों ऑफिस जाने के पीक आवर को ही चुनते हैं ? संडे को सुसाइड करो न बाबा । कौन रोकता है ।“

जया धीरे से बोली, “भले ही आत्महत्या हो पर किसी की जान चली गयी है । हमें यह नहीं भूलना चाहिए । जरा सोचिए उसके परिवार वाले पर क्या बीत रही होगी । एक अन्य पुरुष यात्री ने चिढ़कर कहा, “ये मरने के लिए मेट्रो को ही क्यों चुनते हैं ? मरना ही है, तो कहीं और जाकर मरें । जहर खा लें । पंखे से झूल जाए । ऑफिस देर से पहुँचने पर बॉस की डांट सुननी पड़ती है । भीड़ की ठेलम-ठेल अलग ।“

जया चुप हो गई । कुछ देर जया के आस-पास खड़े यात्रियों में चुप्पी छाई रही । उसने अपने पीछे खड़े किसी यात्री को कहते सुना “कोई आत्महत्या क्यों करता है भला ?” उस व्यक्ति के इर्द-गिर्द खड़े यात्री गण अपना-अपना मंतव्य देने लगे । किसी ने कहा “मामला प्रेम प्रसंग का लगता है । जरूर प्यार में धोखा खाया होगा ।“ किसी का विचार था - किसी से दुश्मनी रही होगी । पीछे से धक्का दे दिया होगा । मामला संगीन है । यह आत्महत्या है या हत्या इसकी सघन जाँच होनी चाहिए । किसी का विचार था - बेरोजगार

रहा होगा या ऐसी नौकरी मिली होगी जिसमें मानसिक दबाव बहुत हो । तभी ट्रैक पर एक मेट्रो ट्रेन आती दिखी । सभी के चेहरे खिल उठे । सभी ने मेट्रो में सवार होने के लिए कमर कस लिया ।

जया भी ठेल- ठाल कर किसी तरह मेट्रो में सवार हुई । वह आज ऑफिस देर से पहुंचेगी । प्यास के मारे उसका कंठ सूखा जा रहा था । भीड़ के दलदल में उसे घुटन हो रही थी । भीड़ में दबी कुचली अपना बैग संभालती वह आत्महत्या किए युवक की बात भूल चुकी थी ।

सुस्मिता सरकार
वरिष्ठ लेखाकार

समय

समय हमारे साथ नहीं
फिर भी कोई बात नहीं
समय पराया होता है ।
ये तो बस ऑंखों का धोखा है
जो इसे न समझे इस जीवन में ।
न जाने वह क्यों रोता है
समय गुजरते देर नहीं
मन में रखो कोई बैर नहीं
कल क्या हो इस जीवन में
कोई जान नहीं पाता है ।।
समय बदलता है इस जीवन में
फिर लौट समय वहीं दिखलाता है
ना जाने इस जीवन में ।
समय एक- सा क्यों दिखता जाता है ।।
जब समय बदलता है जीवन में ।
नया रंग- सा लाता है ।।
फिर भी न जाने क्यों इस जीवन में ।
कुछ भी समझ नहीं आता है
जीवन के इस भाग दौड़ में
समय बीतता जाता है
फिर भी मन में न जाने क्यों
ये सवाल दोहराता है
समय हमारे साथ नहीं
फिर भी कोई बात नहीं
समय वही है जीवन में ।
फिर भी कुछ समझ नहीं आता है
क्या पाया है मैंने इस जीवन में
क्या खोकर जाना है
खाली हाथ ही आये थे
खाली हाथ ही जाना है
समय का खेल आज तक समझ नहीं आया है
फिर भी इस जीवन के समय ने अपना पैगाम बनाया है

इस भाग दौड़ के जीवन में ।
समय का महत्व दिखता है ।।
फिर भी न जाने क्यों यारों ।
समय का फॉर्मूला आज तक समझ नहीं आया है ।।
जब खाली हाथ ही आए है
और खाली हाथ ही जाना है
फिर समय- समय की बातो को लेकर
कौन सा गणित बनाना है
समय हमारे साथ नहीं
फिर भी कोई बात नही।

अमित कुमार,
वरिष्ठ लेखाकार

गाय की रोटी

रुचि दी, एक रोटी ज़्यादा बना देना- यह कहकर निशा नहाने चली गयी। देखते-देखते 9:45 हो गए। अभी पूजा भी करना बाकी था। हफ्ते के पाँच दिन निशा और संजू के ऐसे ही दौड़ते भागते बीतते। निशा जल्दी- जल्दी घर का सारा काम निपटाती। बचा सिर्फ टिफ़िन भरने का काम, वह संजू करता।

पूजा खत्म होने को थी। किचन से संजू के टिफ़िन भरने की आवाज़ आ रही थी। एक रोटी अलग रख लेना- निशा ने कहा। वह फिर अपने कामों में लग गयी। ठीक 10:05 पर दोनों घर से निकलते। आज भी दोनों समय से निकले और रास्ते की ओर ध्यान से देखने लगे। लगभग आधा रास्ता बीत गया। अब तो निशा का मन उदास होने लगा। इतने में संजू को उसके मन की थाह लगी और उसने कहा कि अभी आधा रास्ता बाकी है। दोनों चलने लगे। लेकिन उस दिन निशा और संजू को फिर ऐसे ही लौटना पड़ा।

शाम को लौटते हुए निशा ने पूछा- रोटी का क्या हुआ? संजू ने कहा- वही जो लगभग रोज़ होता है। निशा भी समझ गयी और आगे उसने कुछ न पूछा।

अगले दिन सुबह फिर से एक ज़्यादा रोटी लेकर अपना काम समय से निपटा कर दोनों ऑफिस के लिए निकले। दोनों की नज़र फिर से उसी रास्ते पर। कुछ आगे चल कर निशा ने अचानक चिल्लाते हुए कहा- “गाड़ी रोको”। संजू समझ गया कि आज निशा का काम पूरा होगा। वह गाड़ी से उतरी और उस ओर बढ़ने लगी। उसने रोटी उसे खिलाई और गाड़ी की ओर मुस्कुराते हुए बढ़ने लगी। उसे देख संजू भी मुस्कुराने लगा।

अगले दिन सुबह फिर से वही कार्यक्रम। निशा आज बड़ी उम्मीद से रोटी लेकर निकली। रास्ते के उस मोड पर उसकी नज़र आज फिर से ढूँढने लगी पर आज उसे वहाँ कुछ दिखा नहीं। अपने ऑफिस उतरते हुए उसने वह रोटी संजू को दे दी।

रोज़ निशा बड़े मन से एक रोटी ज़्यादा बनवाती और रास्ते पर निकलते हुए सब ओर गाय ढूंढती। किसी दिन जो उसे गाय दिख जाती तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहता। अपने हाथों से वह रोटी गाय को खिलाती और उसे एक तृप्ति मिलती। उसके घर में शुरू से ढेर सारी गायें थी। माँ को रोज़ देखती उन्हें रोटी खिलाते हुए। लेकिन इस ठेठ शहर में उसे रोज़ कहाँ गायें मिलतीं। कई दिनों में किसी एक दिन को कहीं एक गाय मिलती। उस एक दिन की उम्मीद में निशा रोज़ एक रोटी ज़्यादा लेकर घर से निकलती। जिस दिन गाय नहीं दिखती उस दिन रोटी संजू को दे देती। संजू उस रोटी को रास्ते में दिखने वाले घोड़े को दे देता।

सप्ताह की शुरुआत है और निशा फिर से 'गाय की रोटी' के साथ निकल पड़ी है।

प्रियंका संजीव सिंह
कनिष्ठ अनुवादक

यादें

बड़ी सुनहरी है वे यादें,
आँख बंद करो तो हर समय
याद आती हैं वे बातें
माँ की ममता, बाबा का प्यार
जरा भी चोट लगे तो उठा दे संसार
हर समय माँ की आँचल की छाया
हर पल प्यार का साया
बड़ी सुनहरी है वे यादें
आँख बंद करे तो सिर्फ प्यार ही प्यार
वो घर की याद वो घर का दुलार
बड़ी सुनहरी है वे यादें
थोड़ी सी भूख लग जाती थी, तो हो जाती थी
पकवानों की बरसातें
भाई - बहन का लाड़ था
और उनके साथ तकरार था
जरा सी बात पर लात-घूसों की बरसात थी
फिर एक पल में ही प्यार ही प्यार था
बड़ी सुनहरी हैं वे यादें
काँच की गोलियों से निशाना लगाने
की चाह थी
पेड़ पर निशाना लगा के फल गिराने की चाह थी
बड़ी सुनहरी है वो यादें
आँखें बंद करे तो याद आते हैं
वे बचपन के नटखट इरादें
जलती हुई गर्मी में झूठ बोलकर
खेलने जाने की चाह थी
पकड़े जाने पर माँ की मार
और बाबा का ढेर सारा प्यार था
बड़ी सुनहरी है बचपन की यादें
लुका छिपी के खेल में कट जाते थे
मनमोहक दिन और रातें
स्कूल जाने की चाह थी

शब्दों को लिख पाने की राह थी
शिक्षक का डर था
कुछ कर पाने की चाह
बड़े सुनहरी है वो यादें
लक्ष्य था कुछ करने का
लक्ष्य था दोस्तों से आगे
बढ़ने का ।
दोस्तों से क्रीडा थी
दोस्तों से प्रतियोगिता थी
दोस्तों से प्यार था
दोस्तों से संसार था
दोस्त ही सबसे बड़ा हीरा था
बड़ी सुनहरी है वे यादें
आँख बंद करो तो
याद आयें वे खूबसूरत पल ।

पंकज कुमार गुप्ता
डी.ई.ओ.

उम्मीद

डोर-बेल की आवाज सुनते ही मुन्ना अपनी किताब छोड़ बिस्तर से कूदकर दरवाजे की ओर भागा। सात बरस के मुन्ना को पढ़ाई में जरा भी मन नहीं लगता था। उसे ऐसे ही मौकों की तलाश रहती थी, जब वह पढ़ाई से जी चुरा सके और दरवाजे पर आए आगंतुक ने उसे यह मौका दे दिया था। दरवाजा खोलने के साथ ही मुन्ना चिल्लाया - "अंकल! कश्मीरी चाचा आए हैं"। मैंने कमरे से ही आवाज़ लगाई- "कासिम भाई, कमरे में ही आ जाओ!" मैं अखबार की सुर्खियों में कुछ इस कदर मसरुफ़ था कि उठकर बाहर बरामदे में जाना नागवार लगा। मेरे पलक झपकते ही कासिम मेरे सामने खड़ा था। उसके कांधे से झूलता मटमैला सा बैग अपेक्षाकृत थोड़ा हल्का लग रहा था। उसका चेहरा भी निस्तेज-सा जान पड़ता था। मैंने हाथों के इशारे से उसे पास की कुर्सी पर बैठने के लिए कहा और फिर से अपनी निगाहें अखबार के पन्नों पर जमा दी। कासिम अपने घुटनों पर ज़ोर देकर धीरे से कुर्सी पर बैठ गया और अपने मटमैले बैग को वहीं जमीन पर रख दिया।

थोड़ी देर में ही अखबार से मेरा जी उचट गया। अखबार को बेतरतीब ढंग से मोड़कर बिस्तर पर एक किनारे रखते हुए मैंने कासिम से कहा- "कासिम! देख रहे हो, रोज कैसी-कैसी घटनाएँ छप रही हैं अखबार में।" कासिम ने कोई जबाब नहीं दिया। शायद उसने मेरी बात समझी ही नहीं थी या वह किसी दूसरी सोच में डूबा हुआ था। मैंने ज़ोर देकर उसका नाम पुकारा- "कासिम! यार! कहाँ खोये हो?" उसने हड़बड़ाहट में पास के टेबल पर रखे पानी के ग्लास को एक ही सांस में खाली कर दिया। फिर एक लंबी सांस छोडते हुए बोला- "साहब! माफ कीजिएगा, बहुत तेज प्यास लगी थी।" मैंने कहा- "अरे, कोई बात नहीं मियां! और पानी चाहिए, तो मुन्ना से कहकर मँगवा देता हूँ।" उसने इनकार में सिर को हिलाते हुए कहा- "नहीं साहब! ठीक है।"

मुझे अच्छी तरह से याद है कि कासिम आज से ठीक ग्यारह साल पहले मेरे घर आया था। अभी दो ही दिन हुये थे मुझे इस नए शहर में। कोई मुझे यहाँ जानता भी नहीं था। मैं अपनी पत्नी और चार साल के बच्चे के साथ इस नए शहर और इस नए घर में शिफ्ट हुआ था। सरकारी नौकरी और तबादला ने मुझे इस नए शहर से परिचित कराया था। शहर की रफ्तार धीमी थी, लेकिन जल्दी ही समझ आ गया कि इस धीमी रफ्तार ने लोगों को आपस में जोड़ रखा है। स्नेह, सौहाद्र और भाईचारे का खूबसूरत मेल था यह

शहर और इसकी खूबसूरती हमें कुछ इस कदर भा गई कि कब यह शहर मेरा अपना हो गया, पता ही नहीं चला।

इस नए घर में मैं अपना सामान भी अभी तक नहीं ठीक से रख पाया था कि सामने दरवाजे से किसी ने आवाज दी थी- "साहब! साहब!" मैंने दरवाजा खोला और सामने छरहरे बदन, छह फुट ऊंचे कद और उजले रंग वाले एक नवयुवक को पाया। उसके चेहरे पर अनोखा तेज था और वह कंधे पर बड़ा सा बैग को लटकाए मुस्कुरा रहा था। मैं कुछ पूछ पाता कि उसने बोलना शुरू कर दिया- " पड़ोस के गुप्ता जी ने बताया कि आपलोग यहाँ दो रोज पहले ही आए हैं।" मैंने अनमने ढंग से कहा- "तो? उसने फिर बोलना शुरू किया- "मेरा नाम कासिम है और मैं आसपास के सभी घरों में काजू, किसमिस, मेवे और सूखे फल बेचता हूँ। सोचा कि आपको भी कुछ दे दूँ, इसी बहाने परिचय भी हो जाएगा।" मैंने उसको टालते हुए कहा- "अभी जरूरत नहीं है भाई! जब जरूरत होगी, बाज़ार से ले आऊँगा।" लेकिन उसने जिद सी बांध ली थी। वह बोला- "ठीक है साहब, अगर अभी जरूरत नहीं तो कोई बात नहीं, मैं हर हफ्ते इस मोहल्ले में आता हूँ, यहाँ भी आ जाया करूंगा।" मैं कुछ और बोलता कि उसने फिर बीच में ही टोक दिया- " और हाँ साहब, चिंता मत करिए, मैं बाज़ार से कम कीमत पर आपको समान दूंगा। साथ ही आप एकबार बाज़ार और मेरे दिये गए मेवों का मिलान कर लीजिएगा, फ़र्क पता चल जाएगा।" हम दोनों के इस बातचीत के बीच मेरी पत्नी अपने आँचल से पसीना पोछते हुए बाहर आ गई। उसने मुझे हाथ के इशारे से रोकते हुए उत्सुकता से पूछा- "ऐसा क्या खास है, तुम्हारे मेवों में?" उसने मेवों से भरी पोटली को नीचे जमीन पर रख दिया और उसमें से किशमिश के कुछ दाने पत्नी को दिखाते हुए बोला- "मैडम जी! ऐसे सुंदर, मीठे और बड़े दाने वाले किशमिश आपको पूरे बाज़ार में नहीं मिलेंगे।" मैंने पूछा- "तब फिर तुम कहाँ से लाते हो?" उसने उत्तर दिया- "साहब मैं अपने गाँव से लाता हूँ।" मेरी पत्नी ने पूछा- "कहाँ है, तुम्हारा गाँव?" उसने कहा- "कश्मीर।"

इसके बाद का सारा माजरा हमारी समझ में आ चुका था। एक वह दिन था और एक आज का दिन कासिम कश्मीरी हर महीने की पाँच तारीख के भीतर पहुँच जाता और जरूरत के हिसाब से चीजें दे जाता था। कभी-कभी जरूरत न होने पर भी जबरदस्ती मुन्ने के हाथ में किशमिश का छोटा पाउच पकड़ा जाता था। इतने दिनों में उसका मेरे और मेरे

परिवार के बीच अनोखा लगाव सा हो चुका था। कभी-कभार दूर-दराज से कुछ सामान मंगवाना होता या मेरी अनुपस्थिति में कोई काम करवाना होता, तो उसे बता दिया जाता और वह बहुत ही स्नेह के साथ वह काम कर देता था। वह स्वभाव से खुशमिजाज और मज़ाकिया था, लेकिन आज जिस तरह की खामोशी और उधेड़-बुन उसके भीतर मैं देख रहा था, शायद मैंने पहले कभी नही देखा था। आज उसके माथे पर शिकन की लकीरें साफ दिखाई दे रही थी। मैं पूछ बैठा- "क्या बात है कासिम! तबीयत तो ठीक है न? उसने अपनी गर्दन को ऊपर उठाते हुए धीरे से कहा- "मेरी तबीयत तो ठीक है साहब! लेकिन शहर की तबीयत थोड़ी नासाज लग रही है।"

मुझे कासिम की फिक्र को समझते देर नहीं लगी। अखबार की सुर्खियों में हमारा शहर छाया हुआ था। कश्मीर की हिंसक घटनाओं ने कमोबेश पूरे देश को तनाव में ले लिया था। हमारा शहर इससे अछूता नहीं रह गया था। कुछ उड़ती हुई खबरों से यह भी पता चला था कि घाटी की वारदात को अंजाम देने वालों में एक आरोपी का संबंध अपने शहर से भी है। इस खबर ने लोगों की नींद उड़ा दी थी। हर तरफ भय और शंका का माहौल था। किसी पर भी विश्वास करना संभव नहीं हो पा रहा था। इसके साथ ही कुछ लोग इन घटनाक्रमों को सांप्रदायिक रूप देकर राजनीति की मलाई खाने के लिए तत्पर दिख रहें थे। परिणामस्वरूप पूरे शहर में जगह-जगह सभाएं और जुलूस निकालकर कश्मीरियों को वापस भेजने के नारे लगाए जा रहें थे और तोड़-फोड़ तथा आगजनी को अंजाम दिया जा रहा था। इस भय, संशय और अराजकता के माहौल के बीच कासिम का फिक्रमंद होना लाज़मी था।

इस समय में मुझे भी कासिम के लिए चिंता हो रही थी। मैंने कहा- "कासिम, हो सके तो कुछ दिनों के लिए अपने गाँव लौट जाओ, कश्मीर लौट जाओ। तुम्हारे लिए बेहतर होगा।" वह थोड़ा मुस्कुराया, फिर बोला- साहब! मैं भी सोचता हूँ कि लौट जाऊँ। लेकिन क्या यह शहर मेरा नहीं है? अपनी पूरी उम्र यहाँ जिनके साथ बिताया है, क्या वे मेरे अपने नहीं हैं?" एक गहरी सांस लेने के बाद वह फिर बोला- "अगर ऐसे माहौल में चला जाता हूँ तो इस शहर की बड़ी बदनामी होगी साहब! लोग तो यही कहेंगे न कि इतने बड़े शहर ने एक कासिम को बुरे वक्त में सहारा नहीं दिया।" यह कहते हुए कासिम के चेहरे पर एक पल के लिए वही चमक वापस लौट आई थी। मैंने कहा- ऐसी बात नहीं है कासिम!" रुधे कंठ से जिज्ञासा भाव से उसने कहा- " फिर आपलोग तो हैं ही न मेरे लिए।" मैंने खड़े होकर उसके दोनों हथेलियों को कसकर थाम लिया और उसे विश्वास दिलाया कि मुझसे जो बन पड़ेगा मैं जरूर करूंगा। इसके बाद उसने हमेशा की तरह अपनी

पोटली से एक किसमिस का पैकेट निकाला और चुपचाप टेबल के एक किनारे रखते हुये जाने की मुद्रा में हाथ हिलाया। जैसे ही वह कमरे से बाहर निकला मेरी पत्नी उसके लिए चाय लेकर आई थी। पत्नी के हाथों में चाय का प्याला देखते ही बोला-“मैडम जी! आज चाय पीने का मन नहीं हो रहा है। किसी और दिन पी लूँगा।“ मेरी पत्नी उसके सूखे हुए चेहरे को थोड़ी देर के लिए आश्चर्य से निहारती रह गई। मैंने स्थिति को समझते हुए कहा- “ठीक है, कासिम! अपना ध्यान रखना और हो सके तो मेरी बात पर गौर करना।“ वह बगैर किसी जबाब के कमरे से बाहर चला गया। मैंने पत्नी से कहा- “जाओ, जरा दरवाजा लगा देना।“

कासिम के बाहर जाने के साथ ही मैंने पुनः अखबार के सफ़ों की तरफ ध्यान लगाया, लेकिन अचानक बाहर से आने वाले शोर ने एकबार फिर मेरा ध्यान अखबार से हटा दिया। एक अपरिचित से भय ने मेरे भीतर सिहरन पैदा कर दी। मैंने लपककर दरवाजा खोला और जिस तरफ से आवाजें आ रहीं थी, उधर ही कदम बढ़ाया। घर से कुछ दूरी पर ही भीड़ लगी हुई थी और वहाँ से मारो-मारो, गद्दार, देशद्रोही आदि आवाजें आ रहीं थी । मेरी शंका धीरे-धीरे एक-एक कदम के साथ भयावह विश्वास में बदलती जा रही थी। मैं भीड़ को चीरता हुआ उस जगह पहुँच चुका था, जहां दो लोग किसी को डंडे से पीट रहें थे और तीसरा उस व्यक्ति का कुर्ता इस कदर पकड़ा हुआ है कि वह भाग न सके। एक आदमी और भी था, जो अपने हाथ में एक झण्डा लिए उसे ऐसे लहरा रहा था, जैसे उसने कोई मैदान फतह कर ली हो। मेरे दिमाग की सारी नसें उस वक़्त जम सी गई, जब मैंने देखा कि पिटाई खाने वाला शख्स कोई और नहीं, बल्कि कासिम ही था।

उसके सूखे फलों का पिटारा फटा हुआ सा एक ओर पड़ा था। चारों तरफ किशमिश, काजू और अखरोट के पैकेट बिखरे पड़े थे। काजू और मेवे प्लास्टिक के पाउचों से निकलकर जमीन की धूल से सने जा रहें थे। उधर इतनी मार पड़ने पर भी कासिम खुद को बचाने की गुहार नहीं लगा रहा, बल्कि अपनी बदहाली पर आँसू बहाता हुआ कराह रहा था। सड़क के किनारे की भीड़ केवल तमाशबीन बनकर इस दृश्य का मानो आनंद उठा रही थी। आखिर हम इतने संवेदनहीन कैसे हो सकते हैं कि एक आदमी को सरेआम पिटते हुए देखकर हमारी आत्मा से कोई आवाज नहीं आती। कहीं ऐसा तो नहीं कि हिंसा की बढ़ती खबरों और श्रव्य-दृश्य माध्यमों के द्वारा उसके क्रूर प्रदर्शन ने हिंसा को भी आदमी के लिए स्वाभाविक और मनोरंजन का विषय बना दिया है। जो लड़के उसे पीट रहें थे, उनके सिर पर जैसे उन्माद चढ़ा हुआ था। उन्माद एक नशे की तरह होता है। ऐसा नशा जो चेतना के सारे मार्गों को अवरुद्ध कर इंसान को पागलपन की हद तक पहुंचा देता है।

उन्माद अगर धर्म-संप्रदाय का हो तो और भी घातक हो जाता है, क्योंकि इस उन्माद में हमारे समस्त निजी भावबोध एक समूह के आवरण से ग्रसित हो जाते है, यह आज मैं अनुभूत कर रहा था।

इस वीभत्स दृश्य ने मन को आहत कर दिया। मैंने किसी तरह कासिम को उस लड़के के चंगुल से छुड़ाया। तभी झण्डा लहरा रहे शख्स ने मुझपर चीखते हुये कहा- "अरे! चाचा, इस कश्मीरी को छोड़ो। अभी इन जैसों को सबक सीखाना है।" मैं कुछ बोल पाता कि दूसरे लड़के ने फिर से कासिम का हाथ पकड़ लिया और एक दूसरे लड़के से डंडा छीनकर कासिम के पैर पर वार कर दिया। कासिम दर्द से चीख पड़ा। अब मेरी सहनशक्ति मेरे आपे के बाहर थी। मैंने लपककर उसके हाथ से डंडा छीन लिया। मैं कुछ अनिष्ट कर डालता कि पुलिस की वैन आ गई। वैन को देखते ही वे सब लड़के भाग खड़े हुए, लेकिन जाते-जाते देशद्रोही, गद्दार, हत्यारे जैसे शब्दों से लैस गालियां बके जा रहें थे और धमकियाँ भी दे रहें थे। पुलिस के आने के बाद लोग अपने घरों की ओर चर्चा करते हुए जाने लगें। मेरा मन ग्लानि से भरा जा रहा था। आज पहली बार मुझे इस शहर से नफरत हो रही थी। लोगों के इस रवैये के बारे में सोचकर घिन आ रही थी। मैंने जैसे-तैसे कासिम को सहारा दिया और उसे लेकर आगे क्लीनिक की तरफ बढ़ा, ताकि उसकी मरहम-पट्टी कराई जा सके। लेकिन मेरे भीतर भी एक घाव बन चुका था, जिसकी मरहम-पट्टी शायद नामुमकिन थी।

इस घटना को हुए तीन रोज बीत चुके थे। कासिम के भी शरीर के जख्म भर चुके थे, लेकिन मन का घाव हरा था। हमदोनों के भीतर भय ने अपना डेरा जमा लिया था। मैं सोफ़े पर बैठकर टेलिविजन पर खबर देख रहा था। घाटी में आतंकियों के साथ सुरक्षाबलो के मुठभेड़ में चार सुरक्षाकर्मियों के शहीद होने की खबर समाचार चैनल के ब्रेकिंग न्यूज़ वाली पट्टी पर तैर रही थी। शोक और गुस्से में उबाल मार रहे देश की तस्वीर टीवी पर बार-बार दिखाई जा रही थी। अचानक घंटी बजी और मैं रिमोट के म्यूट बटन को दबाकर दरवाजे की ओर बढ़ा। दरवाजा खोलते ही सामने कासिम खड़ा था। शरीर से चंगा लग रहा था, लेकिन भीतर से टूट चुका था। वह बोला- "साहब! कुछ दिन घर-घर जाकर सामान नहीं बेच पाऊँगा, घुटने का दर्द परेशान कर रहा है।" मैंने पूछा- "फिर क्या सोचा है?" उसने बताया कि यहीं सड़क के पास वाले मैदान के किनारे ही कुछ दिन खोमचा लगाया है। उसने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा- "अभी वहाँ भाई को बैठाकर आया हूँ, सोचा आपको इसकी जानकारी दे दूँ।" मैंने कहा- "चलो, अच्छी बात है। मैं भी चलकर देख लूँ,

कुछ लेना होगा तो ले भी लूँगा।" उसने हाँ में सिर हिला दिया। मैंने भी दरवाजे को भीतर से बंद कर लेने के लिए पत्नी को आवाज दी और उसके साथ हो लिया।

पाँच मिनट के भीतर हम कासिम की दुकान पर पहुँच चुके थे। कासिम ने जूट के बोरे पर अपनी दुकान सजा रखी थी। कई तरह के सूखे फलों से दुकान भरा-पूरा लग रहा रहा। एक किनारे पर एक प्लास्टिक की कुर्सी पर बैठा कासिम का भाई मेवों पर से मक्खियाँ उड़ा रहा था। मुझे देखते ही वह उठ खड़ा हुआ और मेरे लिए कुर्सी आगे खिसका दी। मैंने उसे हाथों से बैठे रहने का इशारा किया, लेकिन वह बैठा नहीं। हम लोग कुछ कहते कि सड़क के दूसरी तरफ के मोहल्ले से लोगों का एक सैलाब आता हुआ दिखाई पड़ा। यह वही मुहल्ला था, जहां के लड़कों ने कासिम की पिटाई की थी। भीड़ में लगभग सौ से ज्यादा लोग होंगे। एक बार फिर दिमाग ने काम करना बंद कर दिया। भीड़ हमारी ओर ही आ रही थी। जैसे-जैसे लोग पास आ रहे थे, वैसे-वैसे डर बढ़ता जा रहा था। मैंने कासिम की हाथ पकड़ लिया। उसके हाथ पसीने से भींग चुके थे। मैंने दोनों भाइयों के चेहरे को देखा। दोनों के होंठ सूख चुके थे और कलेजा जैसे हलक के बाहर आ गया था।

भीड़ एकदम पास आकार रुक गई। हम कुछ बोल पाते कि भीड़ के भीतर से एक युवक बाहर आते हुए बोला- "कश्मीरी चाचा, किशमिश क्या भाव दे रहे हो ?" हमदोनों भावशून्य होकर एक दूसरे के चेहरे को देखने लगें। उसने फिर कहा- "चाचा उस दिन की गलती के लिए हम सब आपसे माफी मांगते हैं और देर मत करिए फटाफट मेवे तौलिये।" देखते ही देखते कासिम के दुकान के सारे मेवे बिक चूके थे। हम सबके चेहरे पर एक मुस्कान तैर रही थी। तीन दिन पहले इस शहर में सिर्फ कासिम घायल नहीं हुआ था बल्कि शहर भी आहत हुआ था। साथ ही क्रूर देशप्रेम के नाम पर देश भी घायल हुआ था। लेकिन आज की घटना ने उस पुराने विश्वास को फिर से जीवित कर दिया। हिंसा और स्नेह के द्वंद्व में स्नेह जयी हुआ था। आज वह शहर लौट आया था संकीर्ण मानसिकता की बेड़ियों को तोड़कर। आज शहर की जीत हुई थी, देश की जीत हुई थी, मर रहे उम्मीद की जीत हुई थी।

कुन्दन कुमार रविदास,

कनिष्ठ अनुवादक

कविता

ओ कविता
बहुत तलाशा तुम्हें
जनपद में, विजन में
मंडी या बाजार में ....
फिर भी, न मिल सका तुमसे
कहीं भी, कभी भी ।
न कर सका चित्रित कोरे कागज पर
शब्दों के मेल बंधन में
छंदों के मायाजाल में, या फिर
छंदहीनता की कल्पना में
रंगीन करके,
श्वेत-श्याम अक्षरों में
जैसे देखता तुम्हें,
पत्र-पत्रिकाओं के पन्नों पर
किताबों के पन्नों पर
छात्राओं के सुर - बेसुर
रटाई में ।

न पाया किसी ख्याली
राहगीर की गुनगुनाहट में,
हरियाली या सुनहरे खेतों में
शांत-अशांत लहरों में
अलस नाव की कोर पर
भाटियाली धून में,
एकतारा की टुंग-टुंग केसरिया आवाज में
उद्देश्यहीन रोमांटिक कदमों में,
अथवा तरूण-तरूणी की
फुसफुसाहट व मुस्कुराहट में
कहीं नहीं, कभी नहीं ।

ओ कविता
मैंने कोशिश तो की,
तुम्हें पहचानने, जानने
समझकर-ना समझकर
परंतु, अबतक
न पहचान सका औरों की तरह,
कहीं भी, कभी भी ।

ओ कविता,
क्या इसलिए तुम रह जाओगे
दूर, और दूर मुझसे ।

ओ कविता,
क्या तुम नहीं सकते,
तुम्हारे उन रंगीन शब्दों की जादू से,
मधुर आवाज के झरनों से
थोड़ा सा सिक्त करने,
सिक्त करने
मेरी चेतना को, व्यक्तित्व को,
मेरे खून के कण-कण में
मेरी पूरी अंतरात्मा को,
मेरी इस ऊसर रेगिस्तान में
मरुद्यान की शीतल छांव, जल और
एक अनाविल हरियाली को लेकर,
अभी भी।

नबेन्दु दाशगुप्त
सहायक लेखा अधिकारी

ब्रांड बनता आदमी

इस उपभोक्तावादी दौर में आदमी का वजूद सिमटकर कब संकुचित हो गया, पता ही नहीं चला। बाजारवाद और भूमंडलीकरण ने विश्व को एक गाँव में बदल दिया। पलक झपकते ही आदमी विश्व के कोने-कोने में पहुँचने लगा। वर्चुअल दुनियाँ ने इस संसार के हर दुर्गम क्षेत्र तक आदमी के पहुँच को सुलभ और संभव बना दिया। यह एक क्रांति सरीखा था, जिसने समाज और लोगों के बीच की दूरी को पाटने का काम किया। लेकिन इस पहुँच ने दो सुदूर दिशाओं के लोगों के बीच सांस्कृतिक जुड़ाव से ज्यादा भौतिक, व्यवसायिक और बाजार-सम्मत जुड़ाव को पैदा किया। परिणाम यह हुआ कि बाजारवाद ने अपना पैर पसारना आरंभ कर दिया। टीवी और इंटरनेट की आग ने इस बाज़ारवाद को इंधन देने का काम किया और आज स्थिति यह है कि आदमी बस ब्रांडवादी उपभोक्ता बनकर रह गया है। अब आदमी की पहचान उसकी आदमीयत से कम और उसके ब्रांड से ज्यादा होने लगी है।

बड़े-बुजुर्ग से लेकर स्त्री और बच्चे ब्रांडिंग के मोहजाल में इस तरह फंस चुके हैं कि इससे निकलना निकट भविष्य में तो असंभव ही जान पड़ता है। स्थिति तो यह है कि बेचारा सुबह-सबेरे नीम और बबुल की लकड़ी से दांतून करने वाला आदमी अपना दांतून चबाता हुआ घर से बाहर निकल जाए तो नई पीढ़ी उसे पकड़कर सर्कस या चिड़ियाघर के हवाले कर दे। दाँत माँजने के लिए आज मंजन की जगह पेस्ट और जेल ने ले ली है। ब्रांड से ज्यादा समस्यापरक ब्रांड की विविधता है, घर में सबके अपने-अपने अलग-अलग ब्रांड हैं। किसी को दांतों में चमक लाने के लिए कॉलगेट चाहिए तो किसी की साँसों की बदबू क्लोज़-अप से मिटानी है। कोई सड़ते दांतों का इलाज़ पेप्सोडेंट में ढूँढता है तो कोई मंजन में भी आध्यात्मिक फीलिंग खोजता है। अतः उसे ब्रांडेड बाबा की ब्रांडेड आयुर्वेदिक मंजन चाहिए। इस मामले में बच्चे तो काफी एडवांस हो गए हैं, उन्हें तो चोको और चेरी फ्लेवर वाला फलाने ब्रांड का पेस्ट चाहिए वरना वे भूख हड़ताल पर जाने तक की धमकी देने लगते हैं।

स्थिति बड़ी भयावह हो चली है। एक वह भी दौर था, जब बच्चे लंगोट में घूमा करते थे। उस समय पाँच पैसे वाली टाफी, माफ कीजिएगा टाफी नहीं, लेमन-चूस! हाँ, पाँच पैसे वाली लेमन-चूस में ऐसी गज़ब वाली फीलिंग आती कि लगता- यहाँ के हम सिकंदर! और सारी दुनियाँ हमारे कदमो के नीचे पानी भर रही होती थी । लेकिन आज का टोडलर भी कैडबरी डेरी मिल्क और किंडर ज्वाय से कम में समझौता नहीं करता है। मैं समझौता इसलिए कह रहा हूँ कि उल्लिखित ब्रांड तब तक ही उन्हें बहलाने के काम आएंगे, जब तक कि कोई दूसरा इंटरनेशनल ब्रांड का नशा उनकी आँखों पर न चढ़े। उसी पुराने दौर की

एक और अनुभव याद आ रही है। सबेरे कुल्ला करने के बाद जब पेट में चूहे कूदतें थे, तो सबसे पहला काम होता था कि रात की बची बासी रोटियों को नमक और तेल से लगाकर उनका रोल बनाना, फिर धीरे-धीरे उसका आनंद लेते हुए गटक जाना। आज भले ही बच्चे ब्रेकफास्ट में कॉर्न फ्लेक्स और पास्ता खाकर “”यम्मी”” और “”टेस्टी-टेस्टी”” का नारा लगाते हैं, लेकिन भूख का स्वाद क्या होता था, यह तो हमलोग ही जानते हैं। शायद उस स्वाद के आगे आज के सारे स्वाद बेस्वाद से जान पड़ते हैं।

जहां तक बच्चों की बात है तो ईडियट बक्से पर दिन-रात होने वाले प्रचार अभियान के कारण वे ब्रांड मोह के गिरफ्त में आ जाते हैं। लेकिन बड़े लोगों के भीतर भी ब्रांड के प्रति तीव्र आकर्षण का मतलब नहीं समझ आता। आप जरा सा कुछ अच्छा पहनकर महफिल में चले जाइए, लोग आपके सामने बीसों ब्रांड का नाम गिना देंगे कि ये वाली शर्ट या पैंट या साड़ी फलाने ब्रांड की है। अथवा इस ब्रांड की यह पोशाक ज्यादा अच्छा आता है और इस ब्रांड का वह वाला प्रॉडक्ट ज्यादा बेहतर होता है। कभी यह कहावत मशहूर हुआ करती थी कि आदमी की पहचान उसके जूतों से होती है, लेकिन आज आदमी की औकात उसके ब्रांड से मापी जाने लगी है। आप क्या खाते हैं और क्या पीते हैं, आपका पहनावा क्या है और आपके खर्चने की क्षमता कितनी है, यह सब आपकी पहचान का बैरोमीटर बन गया है। समस्या तो यह है कि एकदम सामान्य दिनचर्या वाला आदमी भी इस ब्रांड के आकर्षण से बच नहीं पाया है। गांधीजी ने समाज में सादा जीवन, उच्च विचार का सपना देखा था। इसी विचार के तहत उन्होने खादी वस्त्र और परिधान के प्रयोग पर बल दिया था। लेकिन आज खादी भी स्वेदेशी ब्रांड हो गया है। खादी वस्त्र पहनना आज गर्व का विषय है। लेकिन इस गर्व के पीछे न तो इसका स्वदेशी होना है और न ही देशप्रेम की भावना है, बल्कि इसकी बढ़ चुकी कीमत के कारण ही इसकी जमाने में पूछ है। आप किसी भी फूटपाथ के दुकान पर जाकर सौ रुपए मीटर वाला कपड़ा खरीद सकते हैं, लेकिन खादी के लिए आपको ज्यादा पैसे खर्च करने होंगे, इसकी अहमियत यहीं पर है।

इस ब्रांड नामक जिन्न ने घर की महिलाओं को भी अपनी मुट्ठी में कैद कर लिया है। हमारे देश में आमतौर पर यह धारणा रही है कि महिलाएं छोटी-छोटी बचत के द्वारा धन इकट्ठा करती हैं और उसका इस्तेमाल सकारात्मक कामों में करती हैं। लेकिन आज के उपभोक्तावादी परिवेश ने उनकी सन्दुक में सेंधमारी कर दी है। कपड़ों से लेकर आभूषण तक और कोसमेटिक से लेकर साधारण उपयोग की चीजों तक में ब्रांड की चमक दिखाई दे रही है। आज की तारीख में उक्त वस्तुएँ केवल आम जरूरत की चीजें मात्र नहीं रह गई हैं, बल्कि उनका प्रयोग हम दिखाने या शो करने से लेकर प्रतियोगिता के स्तर तक करने लगे हैं। सूचनातंत्र के विविध माध्यमों के द्वारा हमें हर रोज कुछ नए प्रॉडक्ट परोसे जा

रहे हैं और साथ ही उनकी उपयोगिता भी सिद्ध की जा रही है। गोरी त्वचा और काले-लंबे बाल आदिमकाल से ही सौन्दर्य के प्रतिमान रहे हैं, लेकिन सांवला रंग और छोटे बालों के प्रति इतनी वितृष्णा, हीन भावना और भय शायद कभी नहीं रही हो, जितना हमे आज दिख रहा है। गोरी त्वचा पाने की ललक को इस कदर पैदा किया गया है कि कभी-कभी गोरेपन के क्रीम के विज्ञापनों को देखकर मन में रंग-भेद का भाव उभरने लगता है। सच्चाई तो यह है कि गोरा रंग आज एक ब्रांड बन चुका है, जिसे निजी कंपनियाँ अपने आर्थिक मुनाफे के लिए मनमाने ढंग से भुना रही हैं और हम काठ के उल्लू बने उनके इस काम को अपनी मुक्त स्वीकृति दे रहे हैं।

टेलीविजन पर चैनलों की भरमार ने तो आदमी की उपभोक्तावादी प्रवृति को बढ़ावा दिया ही था, लेकिन इंटरनेट और सोशल मिडिया के जाल ने हमारे चेतना को विज्ञापन केन्द्रित बना दिया है। इसका परिणाम हमारे सामने है। हम दिनभर में जितना भी समय इंटरनेट के संपर्क में बिताते हैं, उसका लगभग साठ प्रतिशत समय हम विविध उपभोग्य वस्तुओं के विज्ञापन में खर्च कर रहे होते हैं। सोशल मीडिया पर भी ऐसे विज्ञापनों का ढेर लगा हुआ। बार-बार कम्प्यूटर और मोबाइल के स्क्रीन पर आने वाले विज्ञापन कब अपनी ओर हमे खींच लेते हैं, पता ही नहीं चलता और गाहे-बगाहे हम फलाने ब्रांड और प्रॉडक्ट के आदि हो जाते हैं। ऑनलाइन शॉपिंग कंपनियों की ख्याति ने आदमी को प्रॉडक्ट बनाने में अहम भूमिका निभाई है। अब केवल हम ही अपनी जरूरत की वस्तुओं को खरीदने के लिए बाज़ार नहीं जाते हैं, बल्कि बाज़ार भी हमारे पास आता है। वह हमारी जरूरत को बढ़ता है। कभी आकर्षण के द्वारा, तो कभी प्रलोभन से और कभी-कभी हमें डराकर भी प्रोडक्टस को खरीदने के लिए बाध्य करता है। ऑनलाइन ख़रीदारी वाले सभी प्लेटफॉर्म अपने विज्ञापनों के द्वारा हमारी चेतना में प्रविष्ट होते हैं और अपनी एक विशेष स्थान बना लेते हैं। इन्होने अपने बाज़ार को बढ़ाने के लिए तमाम तरह के हथकंडे अपनाने से जरा भी गुरेज नहीं किया है। ऑफर, डिस्काउंट, छुट, बम्पर, सेल आदि न जाने कितने ही शब्दों के जाल से हमे फंसाया गया है, लेकिन हमें इन सबकी जरा भी परवाह नहीं होती। स्थिति यह है कि जरूरत के साथ ही हम गैर-जरूरी वस्तुओं के भी उपभोक्ता हो गए हैं। दो-चार सौ के फटे जूते में रोज चकती लगवाने वाला आदमी महंगे ब्रांड वाला चार हज़ारी जूता पहनकर घूम रहा है और चौराहे की दुकान से पान खरीदने पर भी मोल-भाव करने वाला आदमी ब्रांडेड शर्ट में अपने तन को लपेटे राजा बाबू सरीखा इतरा रहा है।

इतना तक तो जायज है कि बाज़ार ने आदमी को आकर्षित कर या प्रभावित कर उसे उपभोक्ता बना दिया है, लेकिन समस्या यह है कि आज बाज़ार डराने भी लगा है। बचपन में जब कोई मदारी वाला आता था और हम सब कौतूहलवश जाकर उसके खेल को देखने लगते थे। खेल के बीच में ही वह हमें यह कहकर डराता था कि सभी बच्चे अपनी मुट्ठी खोल दें, वरना उनके घर में कुछ अनिष्ट हो जाएगा और हम डरकर अपनी मुट्ठी खोल देते थे। खेल समाप्ती के पहले अथवा क्लाइमैक्स में खेल को रोककर वह सबसे अपने घर से आटा-चावला या पैसा लाने के लिए कहता था और नहीं लाने पर फिर उसी

अनिष्ट की घोषणा करता था। आज बाज़ार ने मदारी के उस पैंतरे को अपना लिया है। बाज़ार हमें बार-बार डराता है, धमकाता है और उसके प्रति उत्सुकता जगाता है। कभी साँवलेपन से तो, कभी असुरक्षा से, कभी सामाजिक स्थिति से तो कभी बीमारियों से भयभीत करता है। अभिभावक अपने बच्चों को स्वस्थ, सुंदर और दिमागी मजबूती देने के लिए पहले तरह-तरह के घरेलू नुस्खे अपनाते थे। लेकिन आज बिना होर्लिक्स, बूस्ट, कॉम्पलान और पीडिया-श्योर के काम नहीं चलने वाला। अगर माता-पिता इस मामले में उदासीन भी हों तो बच्चे खुद ही याद दिला देते हैं और पड़ोस की रमा आंटी नसीहत देती हुई कहती हैं - "अरे, अनीता! आजकल तुम्हारा बेटा दुबला होता जा रहा है, कुछ होर्लिक्स-वोर्लिक्स देती क्यों नहीं देती, अरे वो नया वाला आया है न, एक्सट्रा एनर्जि वाला ?"

कुल मिलाकर बात यह है कि बाज़ार ने आदमी को धीरे-धीरे ब्रांड में बदल दिया है। आदमी और ब्रांड एक-दूसरे के पर्याय बन गए है। आदमी भले ही सुस्त हो गया हो, लेकिन उसकी जरूरते बढ़ गई हैं या यह कहा जाए कि उसकी जरूरतों को बढ़ा दिया गया है। इन जरूरतों का मोहताज आदमी बाज़ार के अधीन हो गया है। इस उपभोक्तावादी आकर्षण से बचने के लिए कोई उपाय नज़र नहीं आ रहा है और उपाय है भी तो हम इससे बचना नहीं चाह रहे हैं। इसने आदमी की संवेदना को कुंठित कर उसे बाज़ार के आसरे छोड़ दिया है। आदमी के आंतरिक सौन्दर्य को बाहरी भौतिक चमक-दमक ने जैसे आच्छादित कर लिया है। आज बाज़ार का आकर्षण ही सबकुछ है। इस आकर्षण के बाहर की दुनिया जैसे बेमानी सी ही लगने लगी है। चाहे कुछ भी हो लेकिन आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए यह आकर्षण भयावह रूप लेने वाला है। अतः समय रहते अपनी सीमा को पहचानकर इससे एक औसत दूरी बनाने में ही समझदारी है, ताकि हम आदमी ही बने रहें, ब्रांड न बनें।

अमित कुमार
वरिष्ठ लेखाकार

मुट्ठी में चाँद

टीटागढ़, कोलकाता का एक सबर्ब रेल्वे स्टेशन। मैंने घड़ी देखी। रात के ठीक नौ बजकर बीस मिनट हुए हैं। मुझे नौ पच्चीस की लोकल ट्रेन पकड़कर दमदम स्टेशन जाना है। फिर दमदम से मेट्रो ट्रेन।

आज दिन में हल्की बारिश हुई है। बारिश के कारण हवा में थोड़ी ठंडक है। अभी आसमान साफ है। मैंने आसमान की ओर देखा। स्टेशन के टीन शेड के ऊपर पूनम का आभायुक्त चाँद चमक रहा है। रुई के फ़ाहों सा एक टुकड़ा बादल धीरे धीरे चाँद को घेरे में ले रहा है। चाँद को यूं निहारे कितने दिन हो गए! शहर में चाँद निकलने की खबर भी किसे रहती है। शहर की आपाधापी, भागदौड़ और भौतिक विलासिता के पीछे भागते-भागते शहरी को चाँद का हाल जानने की फुर्सत ही कहाँ मिलती है। शहर के लोगों को तो बस उतनी ही खबर रहती है, जो टीवी में दिखे या फिर समाचार पत्र में छपे। चाँद का उदित होना शायद खबर नहीं बनता होगा।

"बाबू, एकटा पयशा दैव ना।' ' बाबू एक पैसा दो न। एक ठिगना-सा मरियल भिखारी मेरे सामने अपनी हथेली फैला दी। खिचड़ी बाल, दढ़ियल, पिचके गाल, झुकी कमर। बड़ा दयनीय लग रहा था बेचारा। घुटने तक चढ़ी गंदी सी लुंगी तथा सिकुड़ा, तुड़ा मुड़ा सा शर्ट पहने वह याचक दृष्टि से मेरी ओर देख रहा था। मैं उसे अनदेखा कर एक दो फ़र्लांग दूर हो गया और अपनी ट्रेन के आने की उद्घोषणा सुनने का बहाना करने लगा।

भिखारी पुनः मेरे समीप आकार अधिक कातर भाव से एक पैसा मांगने लगा। खीजकर मैंने अपना पर्स निकाला। टटोलकर देखा उसमें एक भी सिक्का नहीं है। कुछेक सौ के नोट और एक दस का नोट पड़ा है। मैंने दस के नोट को चुटकी से पकड़ा।

रात भर एक प्राइवेट हॉस्पिटल में रिसैप्शनिस्ट की नौकरी करने पर चार सौ रुपये रोजाना मिलते हैं। कोई साप्ताहिक छुट्टी नहीं मिलती। छुट्टी लो पैसे कटते हैं।

इधर सरकारी नौकरी के लिए फार्म भरने का खर्च। किताबों का खर्च। खाने पीने का खर्च। घर का किराया। ड्यूटि पर आने जाने का किराया। कुछ पैसे तो गाँव में माँ को भी भेजने पड़ते हैं।

मैंने दस के नोट को वापस पर्स में डाल दिया। अपने बैग से टिफिन बॉक्स निकाला। रात के करीब ढाई बजे थोड़ी भूख लगती है। रिसेप्शन काउंटर पर बैठे-बैठे कुछ खा लेता हूँ। टिफिन खोला। दो रोटियाँ दिखीं। दो रोटियों में एक रोटी मैंने भिखारी के हथेली पर धर दिया। उसने रोटी को हथेली पर लेकर प्रणाम करने की मुद्रा में अपने कपाल से लगा लिया।

भोंSSS। ट्रेन ने भोंपू बजाया। मेरी ट्रेन प्लेटफॉर्म पर आ रही है। मैंने टीन शेड के ऊपर चाँद को देखा। रुई के फ़ाहों से बादल छंट चुके हैं । चाँद अपनी आभायुक्त पूर्णता लिए चमक रहा है। मैंने एक नजर भिखारी पर डाली। वह रोटी को मुट्ठी में भींचे एक ओर बढ़ रहा है।

सुस्मिता सरकार

वरिष्ठ लेखाकार

हिन्दी दिवस के अवसर पर आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम की कुछ झलकियाँ

हिन्दी दिवस के अवसर पर राजभाषा मित्र शील्ड प्रदान करते हुए प्रधान महालेखाकार महोदया

हिन्दी दिवस के अवसर पर आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम की एक झलक